ISSN 2278-1633ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-7, अंक: 3, संख्या-53 अगस्त 2024 मूल्य: ₹20

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति संग्रहालय

समिति के दो परिसर हैं- गांधी स्मृति और गांधी दर्शन।

गांधी स्मृति, 5, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली पर स्थित है। इस भवन में उनके जीवन के अंतिम 144 दिनों से जुड़े दुर्लभ चित्र, जानकारियाँ और मल्टीमीडिया संग्रहालय (Museum) है। जिसमें प्रवेश निःशुल्क है।

दूसरा परिसर गांधी दर्शन राजघाट पर स्थित है। यहाँ 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश' प्रदर्शनी, डोम थियेटर और राष्ट्रीय स्वच्छता केंद्र संग्रहालय (Museum) है।

दोनों परिसर के संग्रहालय प्रतिदिन प्रातः 10 से शाम 6:30 तक खुलते हैं।
(सोमवार एवं राजपत्रित अवकाश को छोड़ कर)

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-7, अंक: 3, संख्या-53
अगस्त 2024

संरक्षक
विजय गोयल
उपाध्यक्ष, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

प्रधान सम्पादक
डॉ. ज्वाला प्रसाद

सम्पादक
प्रवीण दत्त शर्मा
पंकज चौबे

परामर्श
वेदाभ्यास कुंडू
संजीत कुमार

प्रबन्ध सहयोग
शुभांगी गिरधर

आवरण
रोहित बहुगुणा

मूल्य : ₹ 20
वार्षिक सदस्यता : ₹ 200
दो साल : ₹ 400
तीन साल : ₹ 500

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति
गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23392796
ई-मेल : antimjangsds@gmail.com
2010gsds@gmail.com
गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट,
नई दिल्ली-110002, की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेखकों द्वारा उनकी रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण उनके अपने हैं, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली के नहीं।
समस्त मामले दिल्ली न्यायालय में ही विचाराधीन।

मुद्रक
पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092

इस अंक में

धरोहर
आदर्श राष्ट्र - *मोहनदास करमचंद गांधी* 5

भाषण
विश्व में बढ़ी है भारत की साख - *श्री नरेंद्र मोदी* 10

संस्मरण
गांधी की कहानी - *लुई फिशर* 13

विशेष
भारतीय संस्कृति की देन - *हजारी प्रसाद द्विवेदी* 21

विमर्श
अगस्त क्रांति में महात्मा गांधी का अवदान - *आचार्य राघवेन्द्र पी. तिवारी* 28
भारत छोड़ो आंदोलन बना जन-आंदोलन - *दिनेश कुमार* 33
आखिरी संघर्ष का स्वतंत्र गान: करो या मरो- *संजीत कुमार* 38

आदिवासी-विमर्श
भारतीय आदिवासी महिलाओं की स्थिति - पूनम पांडे 43

कविता
अनुपम त्रिपाठी की कविताएं 46
इकबाल अहमद की कविता 51

कार्टून में गांधी 52

बाल कहानी
गड़बड़-सड़बड़ - *क्षमा शर्मा* 53
वैभव की मुश्किल - डॉ. रंजना जायसवाल 55

किताब
तुलसी और गांधी - चंद्रपाल शर्मा 57

गांधी क्विज-4 59

रिपोर्ट
महात्मा गांधी एवं जाति का प्रश्न 60

गतिविधियाँ 62

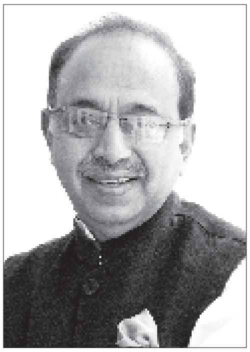

'करो या मरो' ने हिलाई अंग्रेजों की नींव

सन 1942 के आते-आते भारत में आजादी का आन्दोलन अपने चरम पर पहुँच गया था। लोगों में ब्रिटिश सरकार की कारगुजारियों के प्रति गहरी नाराजगी थी। क्रिप्स मिशन की असफलता, जापान से निपटने में ब्रिटिश सरकार की विफलता और भारतीयों से अंग्रेज अधिकारियों की वादाखिलाफी समेत अनेक ऐसे मुद्दे थे, जिसकी वजह से आम जनमानस समेत भारत के तमाम बड़े नेता अंग्रेजों से परेशान हो गए थे। 8 अगस्त को बंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। इस बैठक में 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पारित किया गया। महात्मा गांधी ने उपस्थित लोगों को नारा दिया 'करो या मरो'।

सरकार ने 9 अगस्त की सुबह गांधीजी सहित कांग्रेस के सभी बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। बड़े नेताओं के अभाव में भारी संख्या में लोग इस आंदोलन में कूद पड़े और यह एक जनांदोलन बन गया। बंगाल के तामलुक में 73 वर्षीय मातंगिनी हाजरा, असम के गोहपुर में 13 वर्षीय कनकलता बरुआ, बिहार के पटना में सात युवा छात्र व सैकड़ों अन्य प्रदर्शन में भाग लेने के दौरान गोली लगने से मारे गए। देश के कई भाग जैसे-उत्तर प्रदेश में बलिया, बंगाल में तामलुक, महाराष्ट्र में सतारा, कर्नाटक में धारवाड़ और उड़ीसा में तलचर व बालासोर, ब्रिटिश शासन से मुक्त हो गए और वहां के लोगों ने स्वयं की सरकार का गठन किया। जय प्रकाश नारायण, अरुणा आसफ अली, राम मनोहर लोहिया और कई अन्य नेताओं ने इस दौरान क्रांतिकारी गतिविधियों का आयोजन कर लोगों के दिलों में आजादी की अलख जगाई।

'भारत छोड़ो आन्दोलन' के समाप्त होते-होते वैश्विक स्तर पर भी भारत के पक्ष में माहौल बनने लगा। मजबूत दिखाई देने वाली ब्रिटिश सरकार की नींव हिल गई थी। सरकार ने सोच लिया था कि अब भारत में लम्बे समय तक रहना आसान नहीं है। लिहाजा ब्रिटिश अधिकारियों ने सत्ता हस्तांतरण की कार्रवाई 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के बाद से ही आरम्भ कर दी थी। इस आन्दोलन के दौरान काफी संख्या में लोग मारे गए। सरकारी बर्बरता का शिकार बने सभी आन्दोलनकारियों और सेनानियों को मेरी ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि।

'अंतिम जन' का ताजा अंक अब आपके हाथों में है। इस अंक में 'भारत छोड़ो आंदोलन' पर विशेष सामग्री संकलित की गई है। जिन्हें पढ़कर 'भारत छोड़ो आंदोलन' के बारे में आपकी जानकारी और समृद्ध होगी। आपकी भेजी प्रतिक्रिया हमें कुछ नया और बेहतर करने को प्रेरित करती है, अत: अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत जरूर करवाएं।

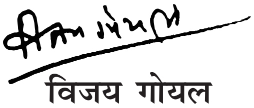

विजय गोयल

देश का गौरव है तिरंगा

इस साल हम आजादी की 77वीं वर्षगांठ मना रहे हैं। भारत की आजादी के आंदोलन में तिरंगे की भी अहम भूमिका रही। जिसका गौरव अक्षुण्ण रखने के लिए अनेक स्वतंत्रता सेनानी आजादी की बलि वेदी पर चढ़ गए। जन–जन में तिरंगे के प्रति प्रेम जगाने के लिए भारत सरकार ने 2022 में एक अभियान चलाया। यह था–'हर घर तिरंगा अभियान'। इसका उद्देश्य लोगों को अपने घर पर तिरंगा फहराने के लिए प्रेरित करना था। हर घर तिरंगा अभियान के तहत गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के अध्यक्ष प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लोगों से अपनी–अपनी सोशल मीडिया प्रोफाइल की फोटो को तिरंगे से बदलने का आह्वान किया। इसके पीछे उनका मकसद भारतीयों में देशभक्ति की भावना का संचार करना था।

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति 'हर घर तिरंगा' के विभिन्न आयोजनों में बढ़–चढ़कर हिस्सा लेती है। इस साल भी 'हर घर तिरंगा पदयात्रा' का आयोजन गांधी वाटिका राजघाट से चरतीलाल गोयल पार्क, लाल किला तक किया गया। जिसमें तिरंगा की शान को बढ़ाने वाले नारों के साथ स्कूली बच्चों और गणमान्य नागरिकों ने हिस्सा लिया। समिति के इस प्रयास से पुरानी दिल्ली के इलाके में लोगों में तिरंगे के प्रति जो समर्पण भाव देखने को मिला, उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त देशभक्तिपूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रम के साथ ही गांधी दर्शन परिसर में एक सुंदर 'गांधी हर्बल वाटिका' का भी उद्घाटन किया गया।

इस अभियान का हिस्सा बनने की इच्छा रखने वाले लोगों ने भारी संख्या में अपनी फोटो व इस अभियान में भाग लेने का सर्टिफिकेट डाउनलोड कर, उसे समिति के सोशल मीडिया हैंडल पर टैग किया।

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति का सदैव यह प्रयास रहता है कि महात्मा गांधी के सपनों का भारत बनाने की दिशा में हरसंभव योगदान देने का काम किया जाए। इसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए हम अनवरत कार्य कर रहे हैं।

'अंतिम जन' के अगस्त अंक में अगस्त क्रांति को लेकर पठनीय सामग्री संकलित की गई है। लुई फिशर, आचार्य राघवेंद्र पी. तिवारी, दिनेश कुमार के विशेष आलेख के जरिए हम 'भारत छोड़ो आंदोलन' की दशा व दिशा को समझ पाएंगे। हर बार की तरह पाठकों के लिए यह अंक भी संग्रहणीय बनाने की कोशिश की गई है। कृपया अपनी प्रतिक्रियाओं से हमें अवगत अवश्य करवाएं।

डॉ. ज्वाला प्रसाद
निदेशक

आपके ख़त

मोहक व सरस पत्रिका

'अंतिम जन' पत्रिका का मई अंक साभार प्राप्त हुआ। आदरणीय उपाध्यक्ष तथा प्रधान संपादक महोदय का विद्वतापूर्ण उद्‌बोधन रुचिकर लगा। इस अंक में धरोहर स्तंभ बाल शिक्षा विषय पर महात्मा गांधी जी के विचार अत्यंत उपयोगी एवं अनुकरणीय हैं। आलेख 'प्राचीन सभ्यता है भारत', 'व्यक्तित्व की बुनियाद', 'गांधी की दृष्टि में मितव्ययिता' 'गांधी और धर्म दृष्टि', जीवनशैली इत्यादि में जीवनोपयोगी मानव मूल्य, ज्ञान, विज्ञान तथा संस्कृति की जानकारी मिलती है। पत्रिका में कालजयी साहित्यकारों की रचनाओं को सम्मानित स्थान दिया जा रहा है, इससे पत्रिका की गौरव-गरिमा और बढ़ जाती है। इस बार सरदार पूर्ण सिंह का महत्वपूर्ण निबंध 'मजदूरी और प्रेम' तथा प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानंदन पंत की कविताओं को स्थान प्राप्त हुआ है, जो इस पत्रिका द्वारा प्रदत्त एक अनूठा उपहार सदृश लगा। इसके साथ बाल साथियों के लिए मनोनुकूल साहित्य प्रत्येक अंक में दिया जा रहा है, यह अत्यंत हर्ष का विषय है। प्रकाश मनु की बाल कहानी 'डाक बाबू का प्यार', मुंशी प्रेमचंद की कहानी 'मोटे राम शास्त्री' तथा बद्री प्रसाद जी की 'कुम्हार' कविता प्रेरणास्पद, मनोरंजक एवं संदेशप्रद लगीं। 'गांधी क्विज' और बाल पहेली प्रस्तुतियाँ मनमोहक हैं।

"मोहक, सरस, स्तरीय पत्रिका, सबको भाती 'अंतिम जन'।
विश्व वंद्य मोहन बापू का समझाती जीवन - दर्शन।
चिंतन - मनन योग्य रचनाएँ, संग्रहणीय अंक प्रत्येक
शुभ साहित्यिक आयोजन का, बार - बार है अभिनंदन।"

गौरीशंकर वैश्य विनम्र
117 आदिलनगर, विकासनगर
लखनऊ 226022
दूरभाष 09956087585

गाँवों को मजबूत करने से ही होगा देश का विकास

महात्मा गांधी मानते थे कि भारत में गरीबी इसलिए है, क्योंकि यहां के गांव गरीब हैं। इसलिए गांधीजी ने गांवों को ताकतवर बनाने की वकालत की थी। वे सर्वोदयी लोकतंत्र की बात करते थे। जिससे उनका तात्पर्य ऐसे लोकतंत्र से था, जिसमें गांवों को समुचित स्थान मिले। 18 जनवरी 1945 को 'हरिजन' में वे लिखते हैं-"सच्चे लोकतंत्र का संचालन केंद्र में बैठे बीस आदमियों से नहीं हो सकता। उसका संचालन नीचे से प्रत्येक गांव के लोगों को करना होगा"। गरीब कल्याण के लिए वे आर्थिक समानता की बात भी करते थे। आर्थिक समानता से उनका मतलब यह नहीं था कि सभी गरीबों के पास पांच एकड़ भूमि हो, अपितु वे चाहते थे कि सरकारी योजनाओं का लाभ गरीबों को मिले। कम से कम मूलभूत सुविधाएं तो उनको मुहैया करवाई जाएं। 1927 में 25-26 सितंबर को बापू काशी आए। बीएचयू में आयोजित एक कार्यक्रम में उन्होंने कहा, 'ईश्वर के नाना रूपों में दरिद्र नारायण का रूप सर्वाधिक पवित्र है, क्योंकि यह चंद धनिकों की अपेक्षा कोटि-कोटि दरिद्रजनों का प्रतिनिधित्व करता है"।

आज जरूरत है कि हम गांधीजी के इन विचारों को मानते हुए, अपनी नीतियों में गांवों को मजबूत करने की योजनाओं को शामिल करें। तभी गरीब मुक्त भारत का निर्माण हो सकेगा। गाँवों के विकास पर ही देश का विकास या निर्माण निर्भर है।

रितु
प्रेम नगर, रोहतक

आप भी पत्र लिखें। सर्वश्रेष्ठ पत्र को पुरस्कृत कर, उपहार दिया जाएगा।

आदर्श राष्ट्र

मोहनदास करमचंद गांधी

प्र० : कहा जाता है कि आप अंग्रेजों को भारत छोड़ने की सलाह देने जा रहे हैं। क्या यह सच है? और यदि उन्होंने आपकी सलाह न मानी, तो क्या आपका इरादा उनके साथ असहयोग करने का है?

गांधीजी : प्राय: सलाह इसी खयाल से दी जाती है कि वह मानी जायेगी। लेकिन हो सकता है कि वह न भी मानी जाये। अत: सलाह देने में दोनों सम्भावनाओं के लिए तैयार रहना पड़ता है। मैं अंग्रेजों को भारत छोड़ने की सलाह अवश्य देता हूँ। मेरा उनसे कहना है कि वे चले जायें। ऐसा मैं क्यों कहता हूँ? क्योंकि उन्हें हर हालत में जाना ही होगा। वे सिंगापुर से लेकर बर्मा और अब भारत के प्रवेश–द्वार तक बराबर हार खाते आ रहे हैं। उनके यहाँ बने रहने का अर्थ भारत के लिए यन्त्रणा होगा। हाँ, मैं उनसे जाने के लिए कहता हूँ। यदि वे नहीं गये तो? तब मुझे सोचना होगा । यदि उन्होंने मेरी सलाह पर ध्यान नहीं दिया, तो मुझे असहयोग या सविनय अवज्ञा द्वारा उन्हें जाने के लिए मजबूर करना पड़ेगा। हो सकता है हमें दोनों ही करने पड़ें। बेशक, आप पूछ सकते हैं कि लड़ाई शुरू होने के दिनों में तो मैं अंग्रेजों को परेशान न करने की नीति के पक्ष में था, तो अब वह नीति क्या है? क्या इस नीति का उससे मेल बैठता है? यहाँ मैं आपको बता दूं कि इस नीति का उसके साथ पूरी तरह मेल बैठता है, क्योंकि अंग्रेजों को मेरी सलाह की जरूरत है। उन्हें इससे कोई परेशानी नहीं होगी। क्योंकि मेरा कहना है कि इस समय युद्ध उनके तट से काफी दूर हो रहा है। भारतीय मोर्चे पर उनके पास युद्ध–सामग्री का अभाव है। स्वदेश में वह उनके पास प्रचुर मात्रा में है। इसलिए, वे स्वदेश लौट जायें। इस तरह वे जापानियों से अधिक अच्छी तरह लड़ सकेंगे। अत: मेरी नीति सुसंगत है। हाँ, यदि वे इस पर गौर नहीं करेंगे तो मुझे उनके लिए परेशानी पैदा करनी पड़ेगी। मैं उसके लिए विवश हूँ। मैं नहीं समझता कि इस बार व्यक्तिगत सत्याग्रह किया जा सकता है। नहीं, वह सार्वजनिक सत्याग्रह होगा यह माँगते हुए कि अंग्रेज यहां से तुरन्त चले जायें, अंग्रेजों के खिलाफ इस प्रकार का पूर्ण सत्याग्रह होगा। याद रखें, मैं जापान–समर्थक नहीं हूँ।

प्राय: सलाह इसी खयाल से दी जाती है कि वह मानी जायेगी। लेकिन हो सकता है कि वह न भी मानी जाये। अत: सलाह देने में दोनों सम्भावनाओं के लिए तैयार रहना पड़ता है। मैं अंग्रेजों को भारत छोड़ने की सलाह अवश्य देता हूँ। मेरा उनसे कहना है कि वे चले जायें। ऐसा मैं क्यों कहता हूँ? क्योंकि उन्हें हर हालत में जाना ही होगा। वे सिंगापुर से लेकर बर्मा और अब भारत के प्रवेश–द्वार तक बराबर हार खाते आ रहे हैं।

असल में जापान इतना अधिक आक्रामक है कि मैं जापान–समर्थक हो ही नहीं सकता । लेकिन राजाजी के साथ मेरा जबरदस्त मतभेद है, क्योंकि जापानियों के साथ मैं किस चीज से लड़ सकता हूँ? प्रत्यक्ष आक्रामक तो अंग्रेज हैं। सचमुच मेरा विश्वास है कि यदि अंग्रेज यहाँ से चले जायें तो भारत के लिए सारा खतरा कम हो जायेगा। मेरा खयाल है कि तब जापान भारत पर हमला नहीं करेगा। जापान ब्रिटेन से लड़ना चाहता है। भारत से उसका कोई मतलब नहीं है। जापान का कोप भाजन बनने के लिए भारत ने क्या किया है? ब्रिटेन ने ही जापान से लड़ाई की है, उसका रास्ता काटा है। इसलिए जापान उससे मोर्चा लेना चाहता है। अतः यह सम्भव है कि अंग्रेजों के भारत से चले जाने के बाद हम जापान के साथ समझौता कर पायें। और यदि तब भी जापान हमारी बात पर ध्यान नहीं देगा तो जापान के खिलाफ भी मेरे पास वही हथियार है जो कि ब्रिटेन के खिलाफ है। भारत में जापानियों को एक बूंद पानी तक नसीब नहीं होगा। हमारी कोशिश पूरी तरह यही होगी। लेकिन जापानियों का मुकाबला कौन करेगा? आजाद भारत करेगा, वह भारत नहीं जिससे यह पूछा तक नहीं गया है कि वह युद्ध में शामिल भी होना चाहता है या नहीं। यहाँ मैं ध्यान दिला दूँ कि राजाजी से मेरा मतैक्य नहीं है। राजाजी मेरे एक पुराने सहयोगी हैं और उनके प्रति मेरे मन में वैसा ही प्रगाढ़ प्रेम है जैसा कि हमेशा रहा है। लेकिन राजाजी की तरह मैं यह नहीं सोचता कि ब्रिटेन और जापान में से ब्रिटेन बेहतर है, और उससे बाद में भी निपटा जा सकता है इस समय तो जापान से निपटना है। अन्य देशों का शोषण करने वाला चाहे साम्राज्यवादी हो अथवा अधिनायकवादी– मेरे लिए तो वह शोषक ही है। नामों से कुछ नहीं होता। इसके अलावा, कौन कहता है कि अंग्रेज बेहतर हैं? मैं यह कभी नहीं कहना चाहता कि राजाजी कांग्रेस से बाहर, यानी बिना कांग्रेस की स्वीकृति के बनी राष्ट्रीय सरकार को स्वीकार कर लेंगे। लेकिन क्या अंग्रेजों ने उसके लिए पेशकश की है? राजाजी जापानियों के खिलाफ उनकी हर प्रकार से मदद करना चाहते हैं। तब इसमें हिचक क्यों? सिर्फ इसलिए कि वे नहीं चाहते कि हमें सत्ता प्राप्त हो।

वे सत्ता नहीं प्रदान करेंगे। वे जो है वही हैं, उन्हें कोई चीज बदल नहीं सकेगी। हाँ, क्रिप्स वापस चले गये हैं। लेकिन वे फिर से समझौता वार्ता क्यों नहीं करते? सप्रू, जयकर या राजाजी के माध्यम से ही क्यों नहीं करते ? इसलिए कि, जैसा मैं कह चुका हूँ, वे करना ही नहीं चाहते। उनके जाने का वक्त आ गया है। राजाजी पाकिस्तान देने को तैयार हैं। लेकिन क्या इस मामले में उनसे बातचीत करने के लिए जिन्ना एक इंच भी हिले हैं? नहीं। क्योंकि जिन्ना की चाल तो यह है कि कांग्रेस पर सरकार का दबाव पड़े, और सरकार पर कांग्रेस का, या फिर दोनों पर एक–दूसरे का दबाव पड़े। राजाजी का कहना है कि भारत के टुकड़े होने दो। लेकिन मैं इससे सहमत नहीं हो सकता। मैं भारत के टुकड़े होने की बात अपने गले नहीं उतार सकता। इस बात को मेरा ही दिल जानता है कि इस विचार से मुझे कितना कष्ट हुआ है। राजाजी मेरे पुराने मित्र और एक चतुर राजनीतिज्ञ हैं। उनके अलग होने से मुझे कितनी तकलीफ पहुंची है, यह सिर्फ मैं ही जानता हूँ। लेकिन वे युद्ध–संकल्प व्यक्ति हैं। उन्हें विश्वास है कि वे हिन्दू–मुस्लिम एकता करवा देंगे। लेकिन पाकिस्तान आखिर है क्या? उसका अर्थ क्या है? इसके अलावा, जब क्रिप्स आये, तो राजाजी उनका प्रस्ताव स्वीकार करने के पक्ष में थे। जवाहरलाल ने माँग को मनवाने की भरसक कोशिश की। आप जानते ही हैं कि जवाहरलाल कितने साफ व्यक्ति हैं। लेकिन कुछ नहीं किया गया और मैं भयानक मानसिक यन्त्रणा के साथ निरन्तर यही कहता आया और स्टेशन पर भी लाखों लोगों ने मुझसे यही कहा । कोई समझौता नहीं। समझौता मत करो! कलकत्ते में भी कुछ मुसलमानों ने – आप जानते ही हैं कि काफी भले

उनके जाने का वक्त आ गया है। राजाजी पाकिस्तान देने को तैयार हैं। लेकिन क्या इस मामले में उनसे बातचीत करने के लिए जिन्ना एक इंच भी हिले हैं? नहीं। क्योंकि जिन्ना की चाल तो यह है कि कांग्रेस पर सरकार का दबाव पड़े, और सरकार पर कांग्रेस का, या फिर दोनों पर एक-दूसरे का दबाव पड़े। राजाजी का कहना है कि भारत के टुकड़े होने दो। लेकिन मैं इससे सहमत नहीं हो सकता। मैं भारत के टुकड़े होने की बात अपने गले नहीं उतार सकता।

लोगों ने मुझसे पूछा 'आप मान तो नहीं गये?' भारतीय जनता की भावना यही थी। और सरकार इससे कैसे इनकार कर सकती है? वह तो यहाँ तक कहती है कि एक भी बर्मी ने जापानियों की मदद नहीं की (हँसी)। लेकिन राजाजी अभी भी उस चीज को पाने की आशा बाँधे हुए हैं जिसे हासिल न होने देने का अंग्रेजों ने दृढ़ संकल्प कर रखा है- यानी हिन्दू-मुस्लिम एकता। वास्तव में पाकिस्तान है क्या? जिन्ना ने यह वस्तुतः कभी भी स्पष्ट नहीं किया है। क्या आप बता सकते हैं? हाँ, हाँ, इससे कौन इनकार करता है?' लेकिन माँग है क्या? अवाम को उल्लू बनाया जा रहा है। अच्छे मुसलमान मुझे इस बात को समझाने में असफल रहे हैं। असल में जब मुझसे गतिरोध समाप्त करने के लिए कहा जाता है तो मैं कबूल करता हूँ कि मैं कुछ नहीं कर सकता। अंग्रेज हमें लड़वाते हैं, यद्यपि हम भी लड़ना चाहते हैं यह बात मैं एक पल भी नहीं छिपाता। अन्यथा हम कभी लड़ें ही नहीं। लेकिन एकता स्थापित करने का एक ही रास्ता है कि हिन्दुस्तान हमारा हो जाये, हम इसे हासिल कर लें। राजाजी लाहौर प्रस्ताव की' बात करते हैं। लेकिन यह प्रस्ताव तो सोचने से बाहर की बात हो गई। क्योंकि आजादी है कहाँ? अराजकता ही एकमात्र रास्ता है। किसी ने मुझसे पूछा, अंग्रेजों के जाने पर यदि अराजकता हो गई तो ? हाँ, वह तो होगी। लेकिन मैं अंग्रेजों से कहता हूँ: हमें अराजकता दे दो। दूसरे शब्दों में मेरा कहना है कि भारत को भगवान के सहारे छोड़ दो। लेकिन यह तो मेरी भाषा हुई, ऐसी भाषा जिसे जनता नहीं समझेगी। इसलिए, मैं कहता हूँ भारत को अराजकता में छोड़ दो। हमें उसका सामना करना ही होगा। आज के हालात की अपेक्षा अराजकता का सामना करना बेहतर होगा। कांग्रेसी मानस न हिन्दू है, न मुसलमान, न ईसाई, न पारसी। इसी कांग्रेसी मानस को - जो एक जीवन्त सत्य है- अराजकता का भार ग्रहण करके उसे हिन्दुस्तान का स्वरूप प्रदान करना होगा। अतः मैं अंग्रेजों से कहता हूँ कि हमें अराजकता का उपहार दे दो। अगर अंग्रेज चले जायें तो वह उपहार हमें स्वयं मिल जायेगा। अगर न गये तो हम सत्याग्रह छेड़कर अराजकता पैदा करेंगे। मैं जानता हूँ कि किसी ने कहा था कि यह मुस्लिम अवाम की माँग है।

यह प्रस्ताव 31 दिसम्बर, 1929 को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 44वें अधिवेशन में पारित हुआ था। इसमें घोषणा की गई थी कि कांग्रेस का लक्ष्य पूर्ण स्वाधीनता है।

आम लोगों में आज भ्रान्ति फैली है। आप देखते है कि मौलाना एक बात कहते हैं और जवाहर दूसरी, राजाजी एक तीसरी ही बात कहते हैं और मैं अब एक चौथी बात कह रहा हूँ। ऐसी हालत में हम क्या करें? मेरी सलाह है कि आप चारों बातों को तौलें, और आपको कौन-सी स्वीकार करनी है, इसका निर्णय स्वयं करें। मैं जवाहर या मौलाना से अभी तक नहीं मिला हूँ। लेकिन, जैसा कि आप भली भांति जानते हैं, यद्यपि कई बार मेरे और जवाहर के भिन्न-भिन्न मत रहे हैं। लेकिन जहाँ कार्रवाई का सवाल आया वे हमेशा मेरे साथ रहे हैं। और मुझे आशा है कि मैं उनको अपने पक्ष में कर लूंगा। जहाँ तक मौलाना का सवाल है, हम वर्षों से सदा एक-दूसरे का साथ देते आये हैं। इस तरह मैं चार विभिन्न सुरों को घटाकर दो कर देने की आशा करता हूँ। तब केवल मेरी और राजाजी की बात रह जायेगी, और आप फैसला कर सकते हैं कि दोनों में से किसकी बात माननी है। यह मैं नहीं बता सकता। लेकिन इतना कह सकता हूँ कि आप किसी भूलाभाई या किसी खेर साहब के असर में आकर निर्णय न करें। आप खुद फैसला कीजिए। लेकिन बुद्धि से सोच-समझकर फैसला कीजिए, क्योंकि अगर आप यों ही मेरे साथ हो जायेंगे तो मेरे लिए रुकावट बनेंगे। और जहाँ तक आपका सम्बन्ध है आपका कोई निजत्व नहीं रह जायेगा।

राजाजी लाहौर प्रस्ताव की' बात करते हैं। लेकिन यह प्रस्ताव तो सोचने से बाहर की बात हो गई। क्योंकि आजादी है कहाँ? अराजकता ही एकमात्र रास्ता है। किसी ने मुझसे पूछा, अंग्रेजों के जाने पर यदि अराजकता हो गई तो ? हाँ, वह तो होगी। लेकिन मैं अंग्रेजों से कहता हूँ: हमें अराजकता दे दो। दूसरे शब्दों में मेरा कहना है कि भारत को भगवान के सहारे छोड़ दो। लेकिन यह तो मेरी भाषा हुई, ऐसी भाषा जिसे जनता नहीं समझेगी।

वा० गं० खेर: लेकिन क्या इस तरह की सामूहिक सविनय अवज्ञा का अर्थ जापानियों की सीधी मदद न

होगा?

उ० : जी नहीं, हम अंग्रेजों को भगा रहे हैं, जापानियों को बुला नहीं रहे हैं। जी नहीं, जो लोग जापानियों को मुक्तिदाता समझते हैं मैं उनसे सहमत नहीं हूँ। चीनी इतिहास इसका द्योतक है। वास्तव में, जब च्यांग काई-शेक यहाँ आये थे, तब मैंने उन्हें जापानियों से मेरे तरीके से लड़ने की सलाह दी थी। असल में, मैं मानता हूँ कि हमें सुभाष बोस का प्रतिरोध करना होगा। मेरे पास प्रमाण तो नहीं हैं, लेकिन मेरा खयाल है कि हिन्दुस्तान में फॉरवर्ड ब्लॉक का एक बड़ा जबरदस्त संगठन है। खैर, सुभाष ने हमारी खातिर भारी खतरा उठाया है। लेकिन यदि वे भारत में जापानियों के मातहत सरकार बनाना चाहेंगे तो हम उनका प्रतिरोध करेंगे। मुझे आशंका है कि फॉरवर्ड ब्लॉक के लोग ऐसा करने का पूरा प्रयास करेंगे। और फिर जैसा कि मैं कह चुका हूँ, हम अपना आन्दोलन केवल अंग्रेजों के खिलाफ छेड़ेंगे। जापानी हमारे साथ तटस्थता-सन्धि करने की आशा कर सकते हैं। क्यों नहीं? वे हम पर हमला क्यों करेंगे ? लेकिन यदि उन्होंने किया तो हम उनका प्रतिरोध करेंगे।

प्र० : मेरे ऊपर एक सार्वजनिक न्यास के भवन का भार है। सैनिक उसे लेना चाहते हैं। उनका कहना है कि मैं हस्ताक्षर करके कागज पर यह लिख दूं कि मैंने यह भवन खुशी से उन्हें दिया है। अन्यथा वे उस भवन को जबरदस्ती ले लेंगे। क्या मुझे उनका प्रतिरोध करना होगा ?

उ० : बिलकुल नहीं। हाँ, यदि आप अपनी जिम्मेदारी पर सत्याग्रह शुरू करना चाहते हैं तो बात दूसरी है। क्योंकि लड़ाई अभी शुरू नहीं हुई है। उसे शुरू करने में मुझे अभी दो माह का समय और लगेगा। इसीलिए मैं चाहता हूँ कि आप सब लोगों के साथ हुई आज की बातचीत गुप्त रखी जाये। कृपया ध्यान रखें कि यह बात समाचार-पत्रों में न जाने पाये। यह भाषा इतनी ऊँची है कि समाचार पत्र इसे ठीक-ठीक समझ नहीं सकेंगे। जहाँ तक सम्भव हो, अपने मित्रों को भी इसका पता न चलने दें।

प्र० : मैं आपसे सिर्फ यह पूछना चाहता हूँ कि एक

आदमी मेरा गला दबा रहा है। तभी एक दूसरा आदमी आकर उसका गला दबाने लग जाता है। तो क्या मुझे उस दूसरे आदमी की मेरा गला दबाने वाले व्यक्ति का गला दबाने में मदद नहीं करनी चाहिए ?

उ० : मैं एक अहिंसक व्यक्ति हूँ, और कहता हूँ कि अपनी स्वतन्त्रता के लिए अवश्य संघर्ष करो, लेकिन उसके बाद एक जानो। मेरा आत्म-सम्मान मुझे यह अनुमति नहीं देगा कि मैं अपना गला दबाने वाले का गला दबाने में मदद करूँ। जी नहीं, मैं जापानियों की मदद नहीं कर सकता। अपनी स्वतन्त्रता हासिल हो जाने के बाद मैं तटस्थ रहूँगा। लेकिन यह तो मेरे-जैसा अहिंसक व्यक्ति करेगा। लेकिन हिंसा को मानने वाले, जैसे कि आपमें से कई हैं, की नैतिकता अलग ही होती है। रूस, जो आजतक ब्रिटेन से घृणा करता रहा है, ब्रिटेन से मदद ले सकता है, और ब्रिटेन, जो रूस से वैसी ही घृणा करता रहा है, रूस को अपनी मदद दे सकता है, क्योंकि दोनों ही हिंसाप्रिय मनोवृत्ति के हैं। अतः आप लोगों में से, जिनके लिए अहिंसा आस्था न होकर मात्र एक अस्त्र है, उनसे मेरा कहना है कि आपको जापान की मदद करने से बाज आने की जरूरत नहीं है, बल्कि अपने प्रति सच्चा रहने के लिए आपको उनकी हर तरह से-सम्भव हो तो हिंसात्मक तरीकों से भी – मदद करनी चाहिए ।

गु० प्र० हठीसिंह: लेकिन बापू

गांधीजी : ओह, मुझे मालूम नहीं था कि तुम यहाँ मौजूद हो (जोरोंकी हँसी) ।

गु० प्र० हठीसिंह : लेकिन बापू, कुछ लोग कहते हैं कि हमें अपना दृष्टिकोण व्यापक रखना चाहिए, भारत को अपनी ही आजादी की बात नहीं सोचनी चाहिए, बल्कि उसे स्वतन्त्रता के लिए संघर्षशील अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों का साथ देना चाहिए। उदाहरणार्थ, कम्युनिस्टों को ही लीजिए। वे कहते हैं कि यह जनयुद्ध है और भारत को, चीन की तरह, जापान से लड़ना चाहिए। यह कहने की जरूरत नहीं कि मैं उनसे सहमत नहीं हूँ। लेकिन आपकी क्या राय है?

उ० : इससे बड़ी मूर्खता और नहीं हो सकती (जोरों की हँसी)। लेकिन भारत है कहाँ? भारत के रूप में भारत का अस्तित्व ही नहीं है। वह तो ब्रिटेन की जेब में है। ऐसा भारत कैसे मदद कर सकता है? और क्यों करे? अंग्रेज हमें देते कुछ नहीं हैं और हमसे माँगते हर चीज हैं, फिर भी उन्हें हम कौन-सी मदद नहीं दे रहे हैं? आपकी तरह मैं अखबार चाटता नहीं हूँ। लेकिन मुझे खबर मिली है कि डेढ़ लाख रंगरूट हर माह भर्ती किये जा रहे हैं, जिनमें से पचास हजार चुने जाते हैं। यह कोई छोटी-मोटी बात नहीं है। इसके अलावा, ब्रिटेन को आर्थिक सहायता मिलती है। सरकारी करों का विरोध भला कौन करेगा? पोस्टकार्ड के दाम, जो छः पाई थे, बढ़ा दिये गये हैं, लेकिन यदि एक रुपया भी हो जायें तो क्या मैं पत्र लिखना बन्द कर दूंगा? फिर हमारी मदद पाने के लिए इतना हो-हल्ला क्यों ? इसके अलावा, चीन की बात और है। उसके पास विशाल मानव-शक्ति है और उसकी सेना भी हमारी तरह भाड़े की सेना नहीं है। सबसे बड़ी बात यह है कि उसके सारे-के-सारे लोग सैनिक प्रवृत्ति के हैं। और यह नई जीवन-प्रणाली और अन्तर्राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की सारी चर्चा क्या है? क्या हम ब्रिटेन और अमेरिका पर भरोसा कर सकते हैं, जब कि दोनों के ही हाथ खून से रंगे हुए हैं? अटलांटिक चार्टर में भारत का नाम कहीं नहीं मिलता। कम्युनिस्टों के कहने के बहुत पहले से ही मैं एक नई जीवन-प्रणाली के बारे में विचार करता आया हूँ। लेकिन यह तब तक असम्भव है जब तक कि अंग्रेज भारतीयों और हब्शियों को आजाद करके वापस नहीं चले जाते। नई जीवन-प्रणाली की बात मुझसे उसके बाद कीजिए। क्योंकि मेरा विश्वास है कि उस तरह का भारत तब सचमुच, एक आदर्श राष्ट्र के रूप में, विश्व को अपनी सेवा अर्पित करेगा।

(भेंट: बम्बई उपनगरवासी और गुजराती कांग्रेसजनों को साधन-सूझ के अनुसार, लगभग 85 मिनिट की इस भेंट-वार्ता के समय बल्लभभाई पटेल, भूलाभाई देसाई, बा० गं० 10 खेर, मोरारजी देसाई और अन्य प्रमुख कांग्रेसजन उपस्थित थे। एक कम्युनिस्ट कार्यकर्ता शरफ अथर अली द्वारा पी० सी० जोशी को भेजी गई इस भेंटवार्ता की रिपोर्ट बीच में रोक ली गई थी। इसकी विश्वसनीयता की जिम्मेदारी नहीं ली जा सकती, लेकिन सरकार ने इसे बरयन्त विश्वसनीय माना था और वाइसराय ने 27 मई को एमरीको इस भेंट का सारांश तार द्वारा भेजा था।)

(15 मई, 1942, गांधी वाङ्मय से साभार)

'विश्व में बढ़ी है भारत की साख'

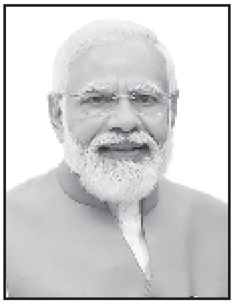

श्री नरेंद्र मोदी

सबसे पहले मैं इंडियन न्यूजपेपर सोसाइटी के सभी सदस्यों को बहुत-बहुत बधाई देता हूं। आज आप सभी को मुंबई में एक विशाल और आधुनिक भवन मिला है। मैं आशा करता हूँ, इस नए भवन से आपके कामकाज का जो विस्तार होगा, आपकी जो Ease of Working बढ़ेगी, उससे हमारे लोकतंत्र को भी और मजबूती मिलेगी। इंडियन न्यूजपेपर सोसाइटी तो आजादी के पहले से अस्तित्व में आने वाली संस्थाओं में से एक है और इसलिए आप सबने देश की यात्रा के हर उतार-चढ़ाव को भी बहुत बारीकी से देखा है, उसे जिया भी है, और जन-सामान्य को बताया भी है। इसलिए, एक संगठन के रूप में आपका काम जितना प्रभावी बनेगा, देश को उसका उतना ही ज्यादा लाभ मिलेगा।

साथियो, मीडिया केवल देश के हालातों का मूकदर्शक भर नहीं होता। मीडिया के आप सभी लोग, हालातों को बदलने में, देश को दिशा देने में एक अहम रोल निभाते हैं। आज भारत एक ऐसे कालखंड में है, जब उसकी अगले 25 वर्षों की यात्रा बहुत अहम है। इन 25 वर्षों में भारत विकसित बने, इसके लिए पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका भी उतनी ही बड़ी है। ये मीडिया है, जो देश के नागरिकों को जागरूक करता है। ये मीडिया है, जो देश के नागरिकों को उनके अधिकार याद दिलाता रहता है। और यही मीडिया है, जो देश के लोगों को ये एहसास दिलाता है कि उनका सामर्थ्य क्या है। आप भी देख रहे हैं, जिस देश के नागरिकों में अपने सामर्थ्य को लेकर आत्मविश्वास आ जाता है, वो सफलता की नई ऊंचाई प्राप्त करने लगते हैं। भारत में भी आज यही हो रहा है। मैं एक छोटा सा उदाहरण देता हूं आपको। एक समय था, जब कुछ नेता खुलेआम कहते थे कि डिजिटल ट्रांजेक्शन भारत के लोगों के बस की बात नहीं है। ये लोग सोचते थे कि आधुनिक टेक्नोलॉजी वाली चीजें इस देश में नहीं चल पाएंगी। लेकिन भारत की जनता की सूझबूझ और उनका सामर्थ्य दुनिया देख रही है। आज भारत डिजिटल ट्रांजेक्शन में दुनिया में बड़े-बड़े रिकॉर्ड तोड़ रहा है। आज भारत के UPI की वजह से आधुनिक Digital Public Infrastructure की वजह से लोगों की Ease of Living बढ़ी है, लोगों के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान तक पैसे भेजना आसान हुआ है। आज दुनियाभर में हमारे जो

> आज भारत एक ऐसे कालखंड में है, जब उसकी अगले 25 वर्षों की यात्रा बहुत अहम है। इन 25 वर्षों में भारत विकसित बने, इसके लिए पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका भी उतनी ही बड़ी है। ये मीडिया है, जो देश के नागरिकों को जागरूक करता है। ये मीडिया है, जो देश के नागरिकों को उनके अधिकार याद दिलाता रहता है।

देशवासी रहते हैं, खासकर के गल्फ के देशों में, वो सबसे ज्यादा रेमिटेंस भेज रहे हैं और उनको जो पहले खर्च होता था, उसमें से बहुत कमी आ गई है और इसके पीछे एक वजह ये डिजिटल रेवेल्यूशन भी है। दुनिया के बड़े-बड़े देश हमसे टेक्नोलॉजी और हमारे implementation model को जानने-समझने का प्रयास कर रहे हैं। ये इतनी बड़ी सफलता सिर्फ सरकार की है, ऐसा नहीं है। इस सफलता में आप सभी मीडिया के लोगों की भी सहभागिता है और इसलिए ही आप सब बधाई के भी पात्र हैं।

साथियो, मीडिया की स्वाभाविक भूमिका होती है, discourse create करना, गंभीर विषयों पर चर्चाओं को बल देना। लेकिन, मीडिया के discourse की दिशा भी कई बार सरकार की नीतियों की दिशा पर निर्भर होती है। आप जानते हैं, सरकारों में हमेशा हर कामकाज के अच्छा है, बुरा है, लेकिन वोट का गुणा-भाग, उसकी आदत लगी ही रहती है। हमने आकर के इस सोच को बदला है। आपको याद होगा, हमारे देश में दशकों पहले बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था। लेकिन, उसके बाद की सच्चाई ये थी कि 2014 तक देश में 40-50 करोड़ गरीब ऐसे थे, जिनका बैंक अकाउंट तक नहीं था। अब जब राष्ट्रीयकरण हुआ तब जो बातें कही गई और 2014 में जो देखा गया, यानी आधा देश बैंकिंग सिस्टम से बाहर था। क्या कभी हमारे देश में ये मुद्दा बना? लेकिन, हमने जनधन योजना को एक मूवमेंट के तौर पर लिया। हमने करीब 50 करोड़ लोगों को बैंकिंग सिस्टम से जोड़ा। डिजिटल इंडिया और भ्रष्टाचार विरोधी प्रयासों में यही काम हमारा सबसे बड़ा माध्यम बना है। इसी तरह, स्वच्छता अभियान, स्टार्टअप इंडिया, स्टैंडअप इंडिया जैसे अभियानों को अगर हम देखेंगे, ये वोट बैंक पॉलिटिक्स में कहीं फिट नहीं होते थे। लेकिन, बदलते हुए भारत में, देश के मीडिया ने इन्हें देश के नेशनल discourse का हिस्सा बनाया। जो स्टार्ट-अप शब्द 2014 के पहले ज्यादातर लोग जानते भी नहीं थे, उन्हें मीडिया की चर्चाओं ने ही घर-घर तक पहुंचा दिया है।

साथियो, आप मीडिया के दिग्गज हैं, बहुत अनुभवी हैं। आपके निर्णय देश के मीडिया को भी दिशा देते हैं। इसलिए आज के इस कार्यक्रम में मेरे आपसे कुछ आग्रह भी हैं।

किसी कार्यक्रम को अगर सरकार शुरू करती है तो ये जरूरी नहीं है कि वो सरकारी कार्यक्रम है। सरकार किसी विचार पर बल देती है तो जरूरी नहीं है कि वो सिर्फ सरकार का ही विचार है। जैसे कि देश ने अमृत महोत्सव मनाया, देश ने हर घर तिरंगा अभियान चलाया, सरकार ने इसकी शुरुआत जरूर की, लेकिन इसको पूरे देश ने अपनाया और आगे बढ़ाया। इसी तरह, आज देश पर्यावरण पर इतना जोर दे रहा है। ये राजनीति से हटकर मानवता के भविष्य का विषय है। जैसे कि, अभी 'एक पेड़ मां के नाम', ये अभियान शुरू हुआ है। भारत के इस अभियान की दुनिया में भी चर्चा शुरू हो गई है। मैं अभी G7 में गया था जब मैंने इस विषय को रखा तो उनके लिए बड़ी उत्सुकता थी क्योंकि हर एक को अपनी मां के प्रति लगाव रहता है कि उसको लगता है कि ये बहुत क्लिक कर जाएगा, हर कोई कह रहा था। देश के ज्यादा से ज्यादा मीडिया हाउस इससे जुड़ेंगे तो आने वाली पीढ़ियों का बहुत भला होगा। मेरा आग्रह है, ऐसे हर प्रयास को आप देश का प्रयास मानकर उसे आगे बढ़ाएं। ये सरकार का प्रयास नहीं है, ये देश का है। इस साल हम संविधान का 75वां वर्ष भी मना रहे हैं। संविधान के प्रति नागरिकों में कर्तव्य बोध बढ़े, उनमें जागरूकता बढ़े, इसमें आप सभी की बहुत बड़ी भूमिका हो सकती है।

आप जानते हैं, सरकारों में हमेशा हर कामकाज के अच्छा है, बुरा है, लेकिन वोट का गुणा-भाग, उसकी आदत लगी ही रहती है। हमने आकर के इस सोच को बदला है। आपको याद होगा, हमारे देश में दशकों पहले बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था। लेकिन, उसके बाद की सच्चाई ये थी कि 2014 तक देश में 40-50 करोड़ गरीब ऐसे थे, जिनका बैंक अकाउंट तक नहीं था।

साथियो, एक विषय है टूरिज्म से जुड़ा हुआ भी। टूरिज्म सिर्फ सरकार की नीतियों से ही नहीं बढ़ता है। जब

हम सब मिलकर देश की ब्रांडिंग और मार्केटिंग करते हैं तो, देश के सम्मान के साथ-साथ देश का टूरिज्म भी बढ़ता है। देश में टूरिज्म बढ़ाने के लिए आप लोग अपने तरीके निकाल सकते हैं। अब जैसे मान लीजिए, महाराष्ट्र के सभी अखबार मिलकर के तय करें कि भई हम सितम्बर महीने में बंगाल के टूरिज्म को प्रमोट करेंगे अपनी तरफ से, तो जब महाराष्ट्र के लोग चारों तरफ जब बंगाल-बंगाल देखें तो उनको लगे कि यार इस बार बंगाल जाने का कार्यक्रम बनाएं, तो बंगाल का टूरिज्म बढ़ेगा। मान लीजिए आप तीन महीने के बाद तय करें कि भई हम तमिलनाडु की सारी चीजों पर सब मिलकर के, एक ये करें के एक दूसरा करें ऐसा नहीं, तमिलनाडु फोकस करेंगे। आप देखिए एक दम से महाराष्ट्र के लोग टूरिज्म में जाने वाले होंगे, तो तमिलनाडु की तरफ जाएंगे। देश के टूरिज्म को बढ़ाने का एक तरीका हो और जब आप ऐसा करेंगे तो उन राज्यों में भी महाराष्ट्र के लिए ऐसे ही कैम्पेन शुरू होंगे, जिसका लाभ महाराष्ट्र को मिलेगा। इससे राज्यों में एक दूसरे के प्रति आकर्षण बढ़ेगा, जिज्ञासा बढ़ेगी और आखिरकार इसका फायदा जिस राज्य में आप ये इनिशिएटिव ले रहे हैं और बिना कोई एक्स्ट्रा प्रयास किए बिना आराम से होने वाला काम है।

अगर भारत की सफलताएं, दुनिया के कोने-कोने तक पहुंचाने का दायित्व भी आप बहुत बखूबी ही निभा सकते हैं। आप जानते हैं कि विदेशों में राष्ट्र की छवि का प्रभाव सीधे उसकी इकोनॉमी और ग्रोथ पर पड़ता है। आज आप देखिए, विदेशों में भारतीय मूल के लोगों का कद बढ़ा है, विश्वसनीयता बढ़ी है, सम्मान बढ़ा है। क्योंकि, विश्व में भारत की साख बढ़ी है। भारत भी वैश्विक प्रगति में कहीं ज्यादा योगदान दे पा रहा है।

साथियो, आप सभी से मेरा आग्रह अपनी ग्लोबल प्रेजेंस बढ़ाने को लेकर भी है। हमें सोचना होगा, दुनिया में हम नहीं है। As far as media is concerned हम 140 करोड़ लोगों के देश हैं। इतना बड़ा देश, इतना सामर्थ्य और संभावनाएं और बहुत ही कम समय में हम भारत को third largest economy होते देखने वाले हैं। अगर भारत की सफलताएं, दुनिया के कोने-कोने तक पहुंचाने का दायित्व भी आप बहुत बखूबी ही निभा सकते हैं। आप जानते हैं कि विदेशों में राष्ट्र की छवि का प्रभाव सीधे उसकी इकोनॉमी और ग्रोथ पर पड़ता है। आज आप देखिए, विदेशों में भारतीय मूल के लोगों का कद बढ़ा है, विश्वसनीयता बढ़ी है, सम्मान बढ़ा है। क्योंकि, विश्व में भारत की साख बढ़ी है। भारत भी वैश्विक प्रगति में कहीं ज्यादा योगदान दे पा रहा है। हमारा मीडिया इस दृष्टिकोण से जितना काम करेगा, देश को उतना ही फायदा होगा और इसलिए मैं तो चाहूंगा कि जितनी भी UN लैंग्वेज हैं, उनमें भी आपके पब्लिकेशंस का विस्तार हो। आपकी माइक्रोसाइट्स, सोशल मीडिया accounts इन भाषाओं में भी हो सकते हैं और आजकल तो AI का जमाना है। ये सब काम आपके लिए अब बहुत आसान हो गए हैं।

साथियो, मैंने इतने सारे सुझाव आप सबको दे डाले हैं। मुझे मालूम है, आपके अखबार में, पत्र-पत्रिकाओं में, बहुत लिमिटेड स्पेस रहती है। लेकिन, आजकल हर अखबार पर और हर एक के पास एक publication के डिजिटल editions भी पब्लिश हो रहे हैं। वहाँ न स्पेस की limitation है और न ही distribution की कोई समस्या है। मुझे भरोसा है, आप सब इन सुझावों पर विचार करके, नए experiments करेंगे, और लोकतंत्र को मजबूत बनाएँगे। और मैं पक्का मानता हूं कि आपके लिए एक, भले ही दो पेज की छोटी एडिशन जो दुनिया की UN की कम से कम languages हों, दुनिया का अधिकतम वर्ग उसको देखता है, पढ़ता है... embassies उसको देखती हैं और भारत की बात पहुंचाने की एक बहुत बड़ा source आपके ये जो डिजिटल एडिशंस हैं, उसमें बन सकता है। आप जितना सशक्त होकर काम करेंगे, देश उतना ही आगे बढ़ेगा। इसी विश्वास के साथ, आप सभी का बहुत-बहुत धन्यवाद! और आप सबसे मिलने का मुझे अवसर भी मिल गया। मेरी आपको बहुत शुभकामनाएं हैं! धन्यवाद!

गांधी की कहानी

लुई फिशर

जून 1942 का जो सप्ताह मैंने सेवाग्राम में बिताया, उसके प्रारंभ में ही प्रकट हो गया था कि गांधीजी ने इंग्लैंड के विरुद्ध 'भारत छोड़ो आंदोलन' छेड़ने का पक्का इरादा कर लिया है। इस आंदोलन का यही नारा होनेवाला था।

एक दिन तीसरे पहर, जब गांधीजी उन कारणों पर विस्तार से प्रकाश डाल चुके, जो उन्हें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध सविनय अवज्ञा–आंदोलन शुरू करने के लिए उकसा रहे थे, तो मैंने कहा–'मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अंग्रेजों के लिए पूरी तरह भारत छोड़कर चले जाना संभव नहीं है। इसका अर्थ होगा भारत को जापान के भेंट कर देना। इसके लिए इंग्लैंड कभी राजी नहीं होगा और संयुक्त राज्य इसे कभी पसंद नहीं करेगा। यदि आपकी माँग यह है कि अंग्रेज अपना बिस्तर–बोरिया समेटकर चले जाएँ, तो आप एक असंभव चीज माँग रहे हैं। आपका यह अभिप्राय तो नहीं है कि वे अपनी सेनाएँ भी हटा लें?'

कम–से–कम दो मिनट तक गांधीजी मौन रहे। कमरे की नि:स्तब्धता मानो सुनाई दे रही थी।

अंत में गांधीजी बोले– 'तुम ठीक कहते हो। हाँ, ब्रिटेन और अमरीका और अन्य देश भी यहाँ अपनी सेनाएँ रख सकते हैं तथा भारत की भूमि का फौजी कार्रवाइयों के अड्डे की तरह उपयोग कर सकते हैं। मैं युद्ध में जापान की जीत नहीं चाहता। किन्तु मुझे विश्वास है कि जब तक भारतीय जनता आजाद न हो जाय, तब तक इंग्लैंड नहीं जीत सकता। जब तक ब्रिटेन भारत पर शासन करता रहेगा, तब तक वह कमजोर रहेगा और अपना नैतिक बचाव नहीं कर सकेगा।'

'परंतु यदि लोकतंत्री देश भारत को अड्डा बना दें, तो बहुत–सी उलझनें पैदा हो जाएँगी। सेनाएँ हवा में नहीं रहा करतीं। मसलन, मित्र राष्ट्रों को रेलों के अच्छे संगठन की अपेक्षा होगी।'

'हाँ–हाँ,' गांधीजी ने उच्च स्वर से कहा– 'वे रेलों का संचालन कर सकते हैं। जिन बंदरगाहों पर उनकी रसद उतरे, वहाँ भी वे व्यवस्था कायम रखना चाहेंगे। वे नहीं चाहेंगे कि बंबई और कलकत्ता में दंगे–फिसाद हों। इन मामलों में परस्पर सहयोग की और सम्मिलित प्रयत्न की आवश्यकता होगी।'

एक दिन तीसरे पहर, जब गांधीजी उन कारणों पर विस्तार से प्रकाश डाल चुके, जो उन्हें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध सविनय अवज्ञा–आंदोलन शुरू करने के लिए उकसा रहे थे, तो मैंने कहा–'मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अंग्रेजों के लिए पूरी तरह भारत छोड़कर चले जाना संभव नहीं है। इसका अर्थ होगा भारत को जापान के भेंट कर देना। इसके लिए इंग्लैंड कभी राजी नहीं होगा...

'क्या इस पारस्परिक सहयोग की शर्तें मित्रता के संधिपत्र में प्रस्तुत की जा सकती हैं?'

'हाँ,' गांधीजी ने सहमति प्रकट की– 'लिखित इकरारनामा हो सकता है।' 'आपने यह बात अभी तक कही क्यों नहीं?' मैंने पूछा– 'मैं कबूल करता हूँ कि जब मैंने सविनय अवज्ञा आंदोलन के आपके इरादे की बाबत सुना, तो मेरा खयाल उसके विरुद्ध हो गया। मैं समझता हूँ कि इससे युद्ध–प्रयत्न में बाधा पड़ेगी। यदि राष्ट्र–धुरी जीत गए, तो मुझे संसार में पूर्ण अंधकार होता दिखाई देता है। मेरा खयाल है कि यदि हम जीत जाएँ, तो हमको एक बेहतर दुनिया बनाने का मौका मिलेगा।'

गांधीजी महसूस करते थे कि भारत के बारे में लोकतंत्री राष्ट्रों की स्थिति नैतिक दृष्टि से असमर्थनीय थी। रूजवेल्ट या लिनलिथगो इस स्थिति को बदलकर उसे रोक सकते थे, वरना उनके हृदय में कोई शंकाएँ नहीं थीं। नेहरू तथा आजाद शंका करते थे। महात्माजी से मतभेद के कारण राजाजी कांग्रेस का नेतृत्व छोड़ चुके थे। परंतु गांधीजी विचलित नहीं हुए। नेहरू और आजाद को उन्होंने अपनी बात जँचा दी।

'यहाँ मैं पूरी तरह सहमत नहीं हूँ', गांधीजी ने तर्क दिया– 'ब्रिटेन अपने को अक्सर पाखंड के चोगे में छिपाए रहता है। वह ऐसे वादे करता है, जिन्हें बाद में निभाता नहीं। परंतु यह बात मैं मानता हूँ कि लोकतंत्री राष्ट्र जीत जाएँ तो बेहतर मौका मिलेगा।'

'यह इस पर निर्भर है कि हम किस तरह की शांति रखते हैं, ''मैंने कहा। यह इस पर निर्भर है कि आप युद्ध में क्या करते हैं, गांधीजी ने मेरी गलती सुधारी– 'युद्ध के बाद स्वाधीनता में मेरी दिलचस्पी नहीं है। मैं अभी स्वाधीनता चाहता हूँ। इससे इंग्लैंड को युद्ध जीतने में मदद मिलेगी।'

मैंने फिर पूछा– 'आपने अपनी यह योजना वाइसराय तक क्यों नहीं पहुँचाई? वाइसराय को मालूम होना चाहिए कि मित्र राष्ट्रों की फौजी कार्रवाइयों के लिए भारत को अड्डा बनाए जाने में अब आपको कोई आपत्ति नहीं है।'

'किसी ने मुझसे पूछा ही नहीं'। गांधीजी ने ढीलेपन से उत्तर दिया।

आश्रम से मेरे रवाना होने से पूर्व महादेव देसाई ने मुझसे चाहा कि मैं वाइसराय से कहूँ कि गांधीजी उनसे मिलना चाहते हैं। महात्माजी समझौते के लिए और शायद सविनय–अवज्ञा–आंदोलन का विचार छोड़ने के लिए तैयार थे। बाद में, दिल्ली में, मुझे गांधीजी का एक पत्र राष्ट्रपति रूजवेल्ट को देने के लिए मिला। साथ के पुर्जे में गांधीजी की विशिष्टता लिए हुए शब्द थे– 'यदि यह आपको पसंद न आएँ तो इसे फाड़ देना।'

गांधीजी महसूस करते थे कि भारत के बारे में लोकतंत्री राष्ट्रों की स्थिति नैतिक दृष्टि से असमर्थनीय थी। रूजवेल्ट या लिनलिथगो इस स्थिति को बदलकर उसे रोक सकते थे, वरना उनके हृदय में कोई शंकाएँ नहीं थीं। नेहरू तथा आजाद शंका करते थे। महात्माजी से मतभेद के कारण राजाजी कांग्रेस का नेतृत्व छोड़ चुके थे। परंतु गांधीजी विचलित नहीं हुए। नेहरू और आजाद को उन्होंने अपनी बात जँचा दी। नेहरू विदेशी तथा घरेलू स्थिति को अनुकूल नहीं मानते थे। गांधीजी ने बतलाया– मैंने लगातार सात दिन तक उनसे बहस की। जिस भावावेश के साथ वह मेरी स्थिति के विरोध में लड़े, उसे मैं बयान नहीं कर सकता।'

'परंतु आश्रम से रवाना होने से पहले, गांधीजी के शब्दों में 'तथ्यों के तर्क ने उन्हें परास्त कर दिया। सच तो यह है कि नेहरू प्रस्तावित सविनय अवज्ञा– आंदोलन के इतने कट्टर समर्थक बन गए थे कि जब कुछ दिन बाद बंबई में मैंने उनसे पूछा कि गांधीजी को वाइसराय से मिलना चाहिए या नहीं, तो उन्होंने उत्तर दिया–'नहीं, किसलिए?' गांधीजी अब भी वाइसराय से मुलाकात की आशा लगाए हुए थे।

गांधीजी में महान आकर्षण था। वह एक निराली प्राकृतिक विचित्रता थे, शांत तथा इस प्रकार अभिभूत करनेवाले, कि पता भी न लगे। उनके साथ मानसिक संपर्क आनंददायक होता था, क्योंकि वह अपना हृदय खोलकर रख देते थे और दूसरा व्यक्ति देख सकता था कि मशीन किस तरह चल रही है। वह अपने विचारों को कभी पूर्ण रूप से व्यक्त करने का प्रयत्न नहीं करते थे। वह मानो बोली में सोचते थे, अपने विचार को हर कदम प्रकट कर देते थे।

आप केवल उनके शब्दों को ही नहीं, बल्कि उनके विचारों को भी सुनते थे। इसलिए आप उनकी परिणाम पर पहुँचने की गति को सिलसिलेवार देख सकते थे। यह चीज उन्हें प्रचारक की भाँति बात करने से रोकती थी। वह मित्र की भाँति बात करते थे। वह विचारों के परस्पर आदान-प्रदान में दिलचस्पी रखते थे और इससे भी अधिक व्यक्तिगत संबंध स्थापित करने में।

गांधीजी का कहना था कि स्वाधीन भारत में संघीय प्रशासन अनावश्यक होगा। मैंने उन्हें संघीय प्रशासन के अभाव से उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयाँ बतलाईं। यह बात उनके गले नहीं उतरी। मैं चकरा गया। अंत में उन्होंने कहा- 'मैं जानता हूँ कि मेरे मत के बावजूद केन्द्रीय सरकार बनेगी।' यह विशिष्ट गांधी-चक्र था। वह किसी सिद्धांत का प्रतिपादन करते थे, उसकी वकालत करते थे और फिर हँसते हुए मान लेते थे कि वह अव्यवहारिक है। समझौते की बातचीत में यह प्रवृत्ति अत्यंत झुंझलाने वाली और समय नष्ट करनेवाली हो सकती थी। कभी-कभी तो वह अपनी कही हुई बातों पर खुद भी आश्चर्य करते थे। उनकी विचारप्रणाली तरल थी। अधिकतर लोग चाहते हैं, उनकी बात सही प्रमाणित हो। गांधीजी भी चाहते थे, परंतु अक्सर वह गलती को मंजूर करके जीत जाते थे।

बूढ़े लोगों की पुरानी बातें याद आया करती हैं। लॉयड जॉर्ज सामयिक घटनाओं के बारे में प्रश्न का उत्तर देना शुरू करते थे, परंतु शीघ्र ही यह बताने लगते थे कि उन्होंने प्रथम महायुद्ध, या सदी के प्रारंभ में सामाजिक सुधार का आंदोलन किस प्रकार चलाया। परंतु तिहत्तर वर्ष की आयु में भी गांधीजी पुरानी बातें याद नहीं करते थे। उनका दिमाग तो आनेवाली चीजों पर था। वर्ष उनके लिए कोई महत्त्व नहीं रखते थे, क्योंकि वह तो अनंत भविष्य की बातें सोचते थे। उनके लिए केवल घंटों का महत्त्व था, क्योंकि जो कुछ वह उस भविष्य को दे सकते थे, उसका यह नाप था।

गांधीजी के पास प्रभाव से कुछ अधिक था, उनके पास सत्ता थी, जो सामर्थ्य से कम, किन्तु बेहतर होती है। सामर्थ्य मशीन का गुण होता है, सत्ता व्यक्ति का गुण होता है। राजनीतिज्ञों में दोनों का तारतम्य होता है। अधिनायक के पास सामर्थ्य लगातार जमा होती रहती है, जिसका दुरुपयोग अनिवार्य होता है और यह सामर्थ्य उसकी सत्ता को छीन लेता है। गांधीजी के सामर्थ्य-त्याग ने उनकी सत्ता को बढ़ा दिया। सामर्थ्य अपने शिकारों के खून और आँसुओं पर पनपती है। सत्ता को सेवा, सहानुभूति तथा स्नेह पनपाते हैं। एक दिन मैं महादेव देसाई को चरखा कातते देखता रहा। मैंने कहा कि मैं गांधीजी की बातों को ध्यान से सुनता आया हूँ, परंतु मुझे बराबर यह आश्चर्य हो रहा है कि जनता पर गांधीजी के अमित प्रभाव का मूल स्रोत क्या है, फिलहाल मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि यह उनकी आसक्ति है।

''यह ठीक है, देसाई ने उत्तर दिया।

'उनकी आसक्ति का मूल क्या है?' मैंने कहा।

देसाई ने समझाया''- 'वह आसक्ति उन तमाम विषयों का चरमोत्कर्ष है जो इस शरीर के साथ लगे हुए हैं।''

'कामासक्ति?'

'काम, क्रोध, व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा गांधीजी को अपने ऊपर पूर्ण निग्रह है। इससे अमित शक्ति तथा आसक्ति उत्पन्न होती रहती है।'

यह आसक्ति शमित और अस्फुट थी। उनमें मृदुल, तीव्रता, कोमल, दृढ़ता और धीरता की रूई में लपेटी हुई अधीरता थी। गांधीजी के साथियों को तथा अंग्रेजों को कभी-कभी उनकी तीव्रता, दृढ़ता और अधीरता पर रोष होता था। परंतु अपनी मृदुलता, कोमलता तथा धीरता के द्वारा वह अपने प्रति उनका आदर और अक्सर उनका प्रेम बनाए रखते थे। गांधीजी एक दृढ़ व्यक्ति थे और उनकी दृढ़ता का कारण उनके व्यक्तित्व का ऐश्वर्य था, न कि उनकी संपत्ति की बहुलता। उनका लक्ष्य था अस्ति, परिग्रह नहीं। आनंद उन्हें आत्मबोध के द्वारा पैदा होता था। वह अभय थे, इसलिए उनका जीवन सत्यमय था। वह अकिंचन थे, पर अपने सिद्धांतों की कीमत चुका सकते थे। गांधीजी व्यक्तिगत नैतिकता तथा सार्वजनिक व्यवहार के बीच एकता के प्रतीक हैं। जब विवेक घर में तो रहता है, परंतु कारखाने में, दफ्तर में, पाठशाला में और बाजार में नहीं रहता, तो भ्रष्टाचार, क्रूरता और अधिनायकशाही के लिए रास्ता खुल जाता है।

गांधीजी ने राजनीति को तथा आचार-नीति को संपन्न बनाया। वह प्रत्येक दिन के विचारार्थ विषयों को शाश्वत तथा सार्वभौम मूल्यों के प्रकाश में सुलझाते थे।

क्षणभंगुर वस्तुओं का सार खींचकर वह स्थायी तत्त्व निकाल लेते थे। इस प्रकार वह मनुष्य के कार्य को कुंठित करनेवाली प्रचलित धारणाओं के ढाँचे को तोड़कर निकल जाते थे। उन्होंने कार्य का एक नया परिमाण खोज निकाला था। व्यक्तिगत सफलता या सुख के लिहाजों से न बँधकर उन्होंने सामाजिक परमाणु का विघटन कर दिया और शक्ति का नया स्रोत पा लिया। इसने उन्हें आक्रमण के वे हथियार दिए, जिनका कोई बचाव नहीं था। उनकी महानता इसमें थी कि वह ऐसे काम करते थे जिन्हें हर एक कर सकता है, परंतु करता नहीं है।

गांधीजी के जीवन-काल में ठाकुर ने लिखा था- 'कदाचित यह सफल नहीं हो पाएँगे। कदाचित यह उसी प्रकार असफल होंगे, जिस प्रकार मनुष्य को खलता से हटाने में बुद्ध तथा ईसा असफल रहे। परंतु लोग इन्हें सदा ऐसे व्यक्ति की तरह याद करेंगे, जिसने अपने जीवन को आनेवाले अनंत युगों के लिए एक नसीहत बना दिया।'

1942 की मई, जून और जुलाई में भारत में दम घोटनेवाली शून्यता का अनुभव होता था। भारतवासी हताश प्रतीत होते थे। ब्रिटिश सेनानायक, संयुक्त राज्य के जनरल जोजेफ स्टिलवेल बची-खुची सेना और हजारों भारतीय शरणार्थी जीतते हुए जापानियों से बचने के लिए बर्मा से भाग रहे थे। जापान भारत के दरवाजे तक आ पहुँचा था। भारत को धावे से बचाने के लिए इंग्लैंड के पास शक्ति नजर नहीं आती थी। हल्ला मचानेवाले भारतवासी अपनी नितांत असहायता से झुंझला रहे थे और तंग आ गए थे। राष्ट्रीय संकट उपस्थित था, तनाव बढ़ता जा रहा था, खतरा सामने था, मौका पुकार रहा था, परंतु भारतवासियों के पास न तो आवाज थी और न कुछ करने की सामर्थ्य।

गांधीजी के लिए यह स्थिति असह्य थी। हाथ-पर-हाथ रखकर बैठ जाना, उनके स्वभाव के प्रतिकूल था। उनका विश्वास था और उन्होंने अपने पीछे चलनेवाले विशाल समुदाय को सिखाया था कि भारतवासियों को अपने भाग्य का स्वयं निर्माण करना चाहिए। गांधीजी को अंधकारपूर्ण भविष्य का पूर्वाभास तो नहीं हो सकता था, परंतु तत्काल परिवर्तन की अत्यावश्यक अपेक्षा का उन्हें जरूर भान हो गया था। स्वाधीन राष्ट्रीय सरकार की शीघ्र स्थापना के लिए वह इंग्लैंड पर अधिक-से-अधिक दबाव डालने को कटिबद्ध थे।

परम शांतिवादी गांधीजी की इच्छा थी कि भारत आक्रमण करनेवाली सेना की सफल अहिंसक पराजय का एक अपूर्व उदाहरण प्रस्तुत करे। साथ ही वह इस वास्तविकता को भी पहचानते थे कि देशों के बीच मरने-मारने का भीषण युद्ध छिड़ा हुआ है। 14 जून 1942 के हरिजन में गांधीजी ने घोषणा की थी- 'यदि यह मान लिया जाय कि राष्ट्रीय सरकार बन जाएगी और वह मेरी आशाओं के अनुरूप होगी, तो उसका पहला काम होगा आक्रांत राष्ट्रों की कार्रवाइयों से बचाव के हित संयुक्त राष्ट्रों के साथ सुलहनामा करना।'

तो क्या गांधीजी युद्ध-प्रयत्न में सहायता करेंगे? नहीं। संयुक्त राष्ट्रीय सेनाएँ भारत भूमि पर रहने दी जाएँगी और भारतवासी ब्रिटिश सेना में भर्ती हो सकेंगे या अन्य सहायता दे सकेंगे। परंतु यदि उनकी बात चले, तो भारतीय सेना तोड़ दी जाएँगी और भारत की नई राष्ट्रीय सरकार विश्व-शांति स्थापित करने में अपनी सारी सामर्थ्य, प्रभाव तथा साधन लगा देगी। क्या ऐसा होने की उन्हें आशा थी? नहीं। उन्होंने कहा था- 'राष्ट्रीय सरकार बनने के बाद मेरी आवाज शायद अरण्यरोदन के समान हो जाय और राष्ट्रवादी भारत शायद युद्ध का दीवाना बन जाय।'

1942 की गर्मियाँ बीतते-बीतते यह स्पष्ट हो गया कि ब्रिटिश सरकार ठुकराए हुए क्रिप्स-प्रस्ताव से आगे नहीं बढ़ेगी। नेहरू वाशिंगटन से कुछ संकेत का इंतजार कर रहे थे। उन्हें आशा थी कि रूजवेल्ट चर्चिल को भारत में नया कदम बढ़ाने के लिए राजी कर लेंगे। कुछ कांग्रेसजनों को शंका थी कि सविनय अवज्ञा की पुकार पर देश में प्रतिक्रिया होगी। गांधीजी की कोई शंकाएँ नहीं थीं। अपना दावा कायम करने के लिए राष्ट्र में जो आगा-पीछा न सोचनेवाली उमंग थी, उसे वह व्यक्त कर रहे थे। कांग्रेस कार्य-समिति ने 14 जुलाई को वर्धा में प्रस्ताव पास किया कि 'भारत में ब्रिटिश शासन तुरंत समाप्त होना चाहिए' और यदि उसकी बात नहीं मानी गई, तो प्रस्ताव में कहा गया कि 'कांग्रेस अपनी इच्छा के विरुद्ध मजबूर होकर सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ेगी, जो अनिवार्य रूप से महात्मा गांधी के नेतृत्व में होगा।'

यह प्रस्ताव अगस्त के प्रारंभ में बंबई में बुलाए गए कांग्रेस महासमिति के अधिवेशन में रखा जानेवाला था। इस बीच गांधीजी ने सेवाग्राम से जापानियों के नाम एक अपील

प्रकाशित की, जिसमें जापान को चेतावनी दी गई कि वह भारत की स्थिति का लाभ उठाकर धावा बोलने की चेष्टा न करे। इसके बाद गांधीजी बंबई गए। *न्यूयार्क हेरल्ड ट्रिब्यून* के प्रतिनिधि ए.टी. स्टील से उन्होंने कहा– 'यदि कोई मुझे समझा सके कि युद्ध के दौरान में भारत को आजादी देने से युद्ध–प्रयत्न खतरे में पड़ जाएगा तो मैं उसकी दलील सुनने को तैयार हूँ।'

स्टील ने पूछा– 'अगर आपको विश्वास हो जाय तो क्या आप आंदोलन बंद कर देंगे?'

'अवश्य, गांधीजी ने उत्तर दिया– 'मेरी शिकायत तो यह है कि ये भले आदमी दूर–दूर से मुझे बातें सुनाते हैं, दूर–दूर से मुझे गालियाँ देते हैं, परंतु नीचे उतरकर कभी मुझ से सीधी बातचीत नहीं करते।'

7 अगस्त को महासमिति के अधिवेशन में कई सौ कांग्रेसी नेताओं ने भाग लिया और 7 व 8 को दिन–दिन भर वाद–विवाद करके उन्होंने वर्धा–प्रस्ताव को कुछ संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया। 8 अगस्त को आधी रात के कुछ ही देर बाद गांधीजी ने महासमिति के सदस्यों के सामने भाषण दिया। उन्होंने जोर देकर कहा– वास्तविक संघर्ष तुरंत ही प्रारंभ नहीं हो जाता। आप लोगों ने कुछ अधिकार मुझे सौंपे हैं। मेरा पहला काम होगा वाइसराय से मुलाकात करना और उनसे प्रार्थना करना कि कांग्रेस की माँग स्वीकार की जाय। इनमें दो–तीन सप्ताह लग सकते हैं। इस बीच आप लोगों को क्या करना है? चरखा तो है ही। लेकिन आपको इससे भी अधिक कुछ करना है। इसी क्षण से आप में से हर एक यह समझ ले कि वह आजाद है और इस तरह बर्ताव करे मानो वह आजाद है और इस साम्राज्यवादी की एड़ी के नीचे नहीं है। गांधीजी इस भौतिकवादी धारणा को उलट रहे थे कि परिस्थितियाँ मन:स्थिति को बनाती हैं। नहीं, मन:स्थिति परिस्थितियों को ढाल सकती है।

प्रतिनिधि लोग घर जाकर सो गए। कुछ ही घंटे बाद पुलिस ने गांधीजी, नेहरू तथा अन्य बीसीयों लोगों को जगाया और सूर्योदय से पहले ही उन्हें जेल में पहुँचा दिया। गांधीजी को पूना के पास यरवडा में आगाखाँ के महल में रखा गया। श्रीमती नायडू, मीरा बहन, महादेव देसाई और प्यारेलाल नैयर को भी उसी समय गिरफ्तार कर लिया गया। दूसरे दिन कस्तूरबा और डा० सुशीला नैयर भी पकड़ी गई।

गांधीजी के साथ एक सप्ताह रहने के बाद मैंने वाइसराय से मुलाकात की थी और उन्हें वह संदेश दिया था जो सेवाग्राम में मुझे सौंपा गया था–गांधीजी वाइसराय से बातचीत करना चाहते हैं। वाइसराय ने उत्तर दिया था– 'यह उच्च स्तर की नीति का मामला है और इस पर अच्छाई–बुराई के लिहाज से गौर किया जायगा।' गांधीजी के जेल के फाटकों में बंद होते ही हिंसा की धाराओं के फाटक खुल गए। गांधीजी का मिजाज भी लड़ाकू हो रहा था। रंगमंच पर छा जाने की अदम्य क्षमता से युक्त काराबद्ध महात्माजी का व्यक्तित्व आगाखाँ के सुनसान महल की दीवारों को तोड़कर बाहर निकल गया और उसने पहले तो ब्रिटिश सरकार के दिमाग को और फिर भारतीय जनता के दिमाग को घेर लिया।

7 अगस्त को महासमिति के अधिवेशन में कई सौ कांग्रेसी नेताओं ने भाग लिया और 7 व 8 को दिन-दिन भर वाद-विवाद करके उन्होंने वर्धा-प्रस्ताव को कुछ संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया। 8 अगस्त को आधी रात के कुछ ही देर बाद गांधीजी ने महासमिति के सदस्यों के सामने भाषण दिया। उन्होंने जोर देकर कहा- वास्तविक संघर्ष तुरंत ही प्रारंभ नहीं हो जाता। आप लोगों ने कुछ अधिकार मुझे सौंपे हैं।

14 अगस्त को गांधीजी ने वाइसराय को जेल से अपना पहला पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने सरकार पर तोड़–मरोड़ और गलत बयानी का आरोप लगाया। लिनलिथगो ने उत्तर दिया कि 'आपकी आलोचना से सहमत होना मेरे लिए संभव नहीं है और न नीति में परिवर्तन करना ही संभव है'। गांधीजी ने कई महीनों प्रतीक्षा की। 1942 की अंतिम तारीख को उन्होंने लिखा–

'प्रिय लार्ड लिनलिथगो,

'यह बिलकुल व्यक्तिगत पत्र है। मेरा खयाल था कि हम आपस में मित्र हैं। 'मगर 9 अगस्त के बाद की घटनाओं से मुझे शंका हो गई है कि अब भी आप मुझे मित्र समझते हैं या नहीं। कड़ी कार्रवाई करने से पहले आपने मुझे बुलाया क्यों नहीं? अपने संदेह मुझे बतलाए क्यों नहीं

और यह क्यों नहीं निश्चय किया कि आपको मिले हुए तथ्य सही भी हैं या नहीं?'

इसलिए गांधीजी ने पत्र के अंत में लिखा– 'मैंने उपवास के द्वारा शरीर को सूली पर चढ़ाने का निश्चय किया है। मुझे मेरी गलती या गलतियों का यकीन दिला दो, तो मैं सुधार करने को तैयार हूँ। अगर आप चाहें, तो बहुत से रास्ते निकाल सकते हैं। नया साल हम सब के लिए शांति लेकर आए।

मैं हूँ आपका सच्चा दोस्त, मो. क. गांधी'

वाइसराय को यह पत्र चौदह दिन बाद मिला। अग्निकांडों और हत्याकांडों का जिक्र करते हुए लिनलिथगो ने अपने उत्तर में लिखा– 'मुझे गहरा दुःख है कि आपने इस हिंसा और अपराध की निन्दा के लिए एक शब्द भी नहीं लिखा। इसके उत्तर में गांधीजी ने कहा–'9 अगस्त के बाद की घटनाओं के लिए मुझे खेद अवश्य है, किन्तु क्या इसके लिए मैंने भारत सरकार को दोषी नहीं ठहराया है? इसके अलावा, जिन घटनाओं पर मेरा न तो प्रभाव है और न काबू तथा जिनके बारे में मुझे केवल इकतरफा बयान मिला है, उन पर मैं कोई मत प्रकट नहीं कर सकता। मुझे विश्वास है कि यदि आप हाथ नहीं उठाते और मुझे मुलाकात का मौका देते, तो अच्छा ही परिणाम निकलता।'

लिनलिथगो ने इस पत्र का तत्काल उत्तर दिया और लिखा– 'मेरे पास इसके सिवा और कोई विकल्प नहीं है कि हिंसा तथा लूटमार के खेदजनक आंदोलन के लिए कांग्रेस को तथा उसके अधिकृत प्रवक्ता– आपको जिम्मेदार मानूँ। आपको उचित है कि 8 अगस्त के प्रस्ताव तथा उसमें व्यक्त की गई नीति का परित्याग करें और भविष्य के लिए मुझे समुचित आश्वासन दें।'

इसके प्रत्युत्तर में गांधीजी ने कहा– 'सरकार ने ही जनता को उभाड़कर पागलपन की सीमा तक पहुँचा दिया है। मैंने जीवन–भर अहिंसा के लिए प्रयत्न किया है, फिर भी आप मुझ पर हिंसा का आरोप लगाते हैं। इसलिए जब मेरे दर्द को मरहम नहीं मिल सकती, तो मैं सत्याग्रही के नियम का पालन करूँगा, अर्थात् शक्ति के अनुसार उपवास करूँगा। यह 9 फरवरी को शुरू होगा और इक्कीस दिन बाद समाप्त होगा। मेरी इच्छा आमरण उपवास की नहीं है, परंतु यदि ईश्वर की इच्छा हो, तो मैं कठिन परीक्षा को सही–सलामत पार करना चाहता हूँ। यदि सरकार अपेक्षित कदम उठाए, तो उपवास जल्दी समाप्त हो सकता है।

वाइसराय ने 5 फरवरी को तुरंत एक लंबा पत्र भेजा, जिसमें दंगे–फिसादों के लिए फिर कांग्रेस को ही जिम्मेदार बताया। पत्र के अंत में कहा गया था– 'आपकी तंदुरुस्ती और आयु के खयाल से, उपवास के आपके निश्चय पर मुझे खेद है। आशा है, आप उपवास का विचार छोड़ देंगे। मैं तो राजनैतिक उद्देश्यों के लिए उपवास के प्रयोग को एक प्रकार की राजनैतिक धौंस मानता हूँ, जिसका कोई भी नैतिक औचित्य नहीं है।'

गांधीजी ने लौटती डाक से इसका उत्तर भेज दिया। उन्होंने लिखा– 'यद्यपि आपने मेरे उपवास को एक प्रकार की राजनैतिक धौंस बतलाया है, तथापि मेरे लिए तो यह उस न्याय के वास्ते सर्वोच्च अदालत की अपील है, जिसे मैं आपसे प्राप्त नहीं कर सका हूँ।' उपवास शुरू होने के दो दिन पूर्व सरकार उपवास के समय के लिए गांधीजी को छोड़ने के लिए तैयार हो गई। गांधीजी ने इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि जेल से छूटने पर वह उपवास नहीं करेंगे। इस पर सरकार ने घोषणा की कि जो कुछ परिणाम होगा, उसकी जिम्मेदारी गांधीजी पर होगी। परंतु वह जेल में जिन डॉक्टरों तथा बाहर के मित्रों को बुलाना चाहें, बुला सकते हैं।

उपवास 10 फरवरी को, घोषणा की हुई तारीख के एक दिन बाद, शुरू हुआ। पहले दिन गांधीजी काफी प्रसन्न थे और दो दिन तक वह सुबह और शाम आधा घंटा घूमने भी जाते रहे। परंतु शीघ्र ही उनके स्वास्थ्य की बुलेटिनें चिन्ता उत्पन्न करने लगीं। छठे दिन छह डाक्टरों ने बयान दिया कि गांधीजी की हालत ज्यादा गिर गई है। दूसरे दिन वाइसराय की कार्यकारिणी कौन्सिल के तीन सदस्यों–सर होमी मोदी, श्री नलिनीरंजन सरकार और श्री अणे–ने सरकार के उस दोषारोपण के विरोध में कौन्सिल से त्यागपत्र दे दिए, जिसके कारण गांधीजी को उपवास करना पड़ा था। महात्माजी को छोड़ने के लिए देश–भर में माँग होने लगी। ग्यारह दिन बाद लिनलिथगो ने गांधीजी की रिहाई के तमाम प्रस्तावों को ठुकरा दिया।

गांधीजी की परिचर्या के लिए कलकत्ता से डा० विधानचंद्र राय आ गए। अंग्रेज डाक्टरों ने सलाह दी कि

महात्माजी को बचाने के लिए इंजेक्शनों के द्वारा उनके शरीर में खुराक पहुँचाई जाय। भारतीय डाक्टरों ने कहा कि इससे उनकी मृत्यु हो जाएगी। गांधीजी इंजेक्शनों के विरुद्ध थे। वह इन्हें हिंसा मानते थे। यरवडा पर भीड़ जमा होने लगी। सरकार ने जनता को महल के मैदान में जाने की और गांधीजी के कमरे में कतार बाँधकर निकलने की अनुमति दे दी। देवदास और रामदास भी आ पहुँचे। इंग्लैंड की भारत मित्र समिति के होरेस अलेक्जेंडर ने बीच में पड़कर सरकार से बातचीत करने का प्रयत्न किया। इन्हें झिड़की दे दी गई। श्री अणे मरणासन्न महात्माजी से मिलने आए। गांधीजी नमक या फलों का रस मिलाए बिना पानी ले रहे थे। उनके गुर्दे जवाब देने लगे और खून गाढ़ा होने लगा। तेरहवें दिन नब्ज कमजोर पड़ गई और चमड़ी ठंडी और गीली हो गई। आखिरकार महात्माजी को इस बात पर राजी कर लिया गया कि उनके पीने के पानी में मुसंबी के ताजे रस की कुछ बूँदें मिला दी जाएँ। इससे उलटियाँ बंद हो गई। गांधीजी प्रसन्न दिखाई देने लगे।

2 मार्च को उपवास की समाप्ति पर कस्तूरबा ने गांधीजी को एक गिलास में तीन छंटाक नारंगी का रस पानी मिलाकर दिया। वह बीस मिनट तक घूँट घूँट करके इसे पीते रहे। उन्होंने डाक्टरों को धन्यवाद दिया और धन्यवाद देते समय रो पड़े। आगामी चार दिन तक गांधीजी ने केवल नारंगी का रस लिया, फिर बकरी के दूध, फलों के रस और फलों के गूदे पर आ गए। उनका स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधरने लगा। भारत के प्रमुख गैर-कांग्रेसी नेताओं ने अब गांधीजी की रिहाई के लिए तथा सरकार द्वारा समझौते की नई नीति अपनाई जाने के लिए आंदोलन शुरू कर दिया। सर तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य लोगों ने गांधीजी से मिलने की अनुमति माँगी। लिनलिथगो ने इन्कार कर दिया। 25 अप्रैल को, भारत में रूजवेल्ट के व्यक्तिगत प्रतिनिधि विलियम फिलिप्स ने अमरीका लौटने से पूर्व, विदेशी संवाददाताओं को बताया- 'मैं चाहता था कि गांधीजी से मिलूँ और बातचीत करूँ। इसके लिए मैंने संबंधित अधिकारियों से अनुमति देने की प्रार्थना की, परंतु मुझे सूचना दी गई कि आवश्यक अनुमति नहीं दी जा सकती।' लिनलिथगो के व्यवहार ने गांधीजी के हृदय में कटुता उत्पन्न कर दी, जो उनके स्वभाव में नहीं थी। जब वाइसराय अपना बढ़ा हुआ कार्यकाल पूरा करके जाने की तैयारी में थे, तो 27 सितंबर 1943 को गांधीजी ने उन्हें लिखा :

'प्रिय लार्ड लिनलिथगो,

भारत से आपकी विदाई के समय मैं आपसे कुछ शब्द कहना चाहता हूँ। जिन उच्च अधिकारियों से परिचय का मुझे सम्मान प्राप्त हुआ है, उन सबमें आपके कारण मुझे जितना गहरा दु:ख हुआ है, उतना और किसी के कारण नहीं हुआ। इस खयाल ने मुझे बहुत चोट पहुँचाई है कि आपने झूठ को प्रश्रय दिया और वह भी ऐसे व्यक्ति के बारे में, जिसे किसी समय आप अपना मित्र समझते थे। मैं आशा और प्रार्थना करता हूँ कि किसी दिन ईश्वर आपको यह महसूस करने की बुद्धि दे कि एक महान राष्ट्र के प्रतिनिधि होकर आप गंभीर गलती में पड़ गए।

'सद्भावनाओं के साथ,

मैं अभी तक हूँ आपका मित्र मो. क. गांधी

लिनलिथगो ने 7 अक्तूबर को उत्तर दिया:

'प्रिय श्री गांधी,

'मुझे आपका 27 सितंबर का पत्र मिला। मुझे वास्तव में खेद है कि मेरे किन्हीं कार्यों अथवा शब्दों के बारे में आपकी ये भावनाएँ हैं, जो आपने बयान की हैं। परंतु मैं, जितनी नम्रता से हो सकता है, आपको स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि प्रस्तुत घटनाओं के संबंध में मैं आपकी व्याख्या स्वीकार करने में असमर्थ हूँ।

'जहाँ तक समय तथा विचारणा के शोधक गुणों का संबंध है, ये तो अपने प्रभाव में स्पष्टतया सार्वत्रिक है और कोई भी बुद्धिमान इनकी उपेक्षा नहीं कर सकता।

'मैं हूँ

आपका लिनलिथगो'

गांधीजी के लिए जेल में यों रहना एक बेचैनी-भरी ट्रैजिडी थी, जिसमें कोई राहत नहीं थी। व्यापक हिंसा ने तथा उसे रोकने की असमर्थता ने उन्हें व्याकुल कर दिया था। व्यक्तिगत क्षति ने इस दु:ख को और भी गहरा कर दिया। आगाखाँ महल में आने के छ: दिन बाद ही महादेव देसाई को अकस्मात दिल का दौरा हुआ और वह बेहोश हो गए।

गांधीजी ने पुकारा - 'महादेव, महादेव!'

'महादेव, देखो, बापू तुम्हें पुकार रहे हैं, कस्तूरबा ने चिल्लाकर कहा। परंतु महादेव का प्राणांत हो चुका था।

इस मृत्यु से गांधीजी को भारी आघात पहुँचा। महल के मैदान में जिस स्थान पर महादेव देसाई की अस्थियाँ गाड़ी गई थीं, वहाँ वह रोज जाते थे। शीघ्र ही इससे भी गहरे व्यक्तिगत शोक ने गांधीजी को अभिभूत कर दिया। कस्तूरबा बहुत दिनों से बीमार थीं और दिसंबर 1943 में श्वास नली का प्रदाह पुराना पड़ जाने से उनकी हालत गंभीर हो गई। डा० गिल्डर तथा डा० सुशीला नैयर उनकी चिकित्सा कर रहे थे, परंतु कस्तूरबा ने प्राकृतिक चिकित्सक डा० दीनशा मेहता को बुलाना चाहा। उन्होंने कई दिन तक सारे उपचार किए। अंत में जब वह हार मान गए, तो डा० गिल्डर, डा० नैयर तथा डा० जीवराज मेहता ने अपने प्रयत्न फिर चालू किए। परंतु ये भी असफल रहे। सरकार ने उनके पुत्रों तथा पौत्रों को उनसे मिलने की अनुमति दे दी। बा ने अपने सबसे बड़े पुत्र हरिलाल गांधी से खासतौर पर मिलने की इच्छा प्रकट की।

गांधीजी घंटों तक बा के बिस्तर के पास बैठे रहे। उन्होंने सब दवाइयाँ रोक दीं और शहद तथा पानी के सिवा सब खुराक बंद करा दीं। उन्होंने कहा– 'यदि ईश्वर की इच्छा होगी तो यह अच्छी हो जाएगी, नहीं तो मैं इसे जाने दूँगा, परंतु अब और दवाइयाँ नहीं दूँगा।' पेनिसिलिन, जो उस समय भारत में दुष्प्राप्य थी, हवाई जहाज द्वारा कलकत्ते से मँगवाई गई। देवदास ने इसके लिए बहुत जोर दिया था।

गांधीजी को मालूम नहीं था कि पेनिसिलिन का इंजेक्शन लगाया जाता है। मालूम होने पर उन्होंने इसे रोक दिया। 21 फरवरी को हरिलाल गांधी आ गए। वह नशे में थे और कस्तूरबा के सामने से उन्हें जबरदस्ती हटाया गया। बा रोने लगीं और अपना माथा पीटने लगीं। (हरिलाल अपने पिता की अंत्येष्ठि में बेपहचाने शामिल हुए थे और उस रात देवदास के पास ठहरे थे। 19 जून 1948 को बंबई के क्षय-चिकित्सालय में इस परित्यक्त की मृत्यु हो गई।)

दूसरे दिन दिन गांधीजी की गोद में सिर रखे हुए कस्तूरबा ने प्राण त्याग दिए। देवदास ने चिता में आग दी। अस्थियाँ महादेव देसाई की अस्थियों के पास गाड़ दी गई।

अंत्येष्ठि के बाद गांधीजी अपने बिस्तर पर चुपचाप बैठ गए और समय-समय पर जैसे विचार आते गए वह कहते गए–'बा के बिना मैं जीवन की कल्पना नहीं कर सकता। उसकी मृत्यु से जो जगह खाली हुई है, वह कभी नहीं भरेगी। हम कुरो बासठ वर्ष तक साथ रहे। और वह मेरी गोद में मरी। इससे अच्छा क्या होता? मैं हद से ज्यादा खुश हूँ।' कस्तूरबा की मृत्यु के छः सप्ताह बाद गांधीजी को सख्त मलेरिया ने घेर लिया और उन्हें सन्निपात हो गया। बुखार 105 डिगरी तक चढ़ गया। शुरू में उन्होंने सोचा था कि फलों के रस से और उपवास से इसका इलाज हो जाएगा, इसलिए उन्होंने कुनैन लेने से इन्कार कर दिया। परंतु दो दिन बाद वह ढीले पड़ गए। दो दिन में उन्हें कुल तैंतीस ग्रेन कुनैन दी गई और बुखार जाता रहा।

3 मई को गांधीजी के चिकित्सकों ने बुलेटिन निकाला कि उनकी रक्तहीनता बढ़ गई है और उनका रक्त-चाप गिर गया है। 'उनकी साधारण अवस्था फिर गंभीर चिन्ता उत्पन्न कर रही है।' भारत-भर में उनकी रिहाई के लिए आंदोलन फैल गया। 6 मई को सुबह 8 बजे गांधीजी और उनके साथी रिहा कर दिए गए। बाद की परीक्षा से पता लगा कि उनकी आँतों में हुकवर्म तथा पेचिश के कीटाणु थे। जेल में गांधीजी का यह अंतिम निवास था। कुल मिलाकर वह 2089 दिन भारत की जेलों में और 249 दिन दक्षिण अफ्रीका की जेलों में रहे। जेल से छूटने के बाद गांधीजी बंबई के पास जुहू में समुद्र तट पर शांतिकुमार मुरारजी के घर में ठहरे।

श्रीमती मुरारजी ने एक चलचित्र देखने का सुझाव रखा। गांधीजी ने जीवन में कोई चलचित्र नहीं देखा था। बहुत कुछ कहने पर वह राजी हो गए। वहीं घर पर उन्हें *मिशन टु मास्को* नामक फिल्म दिखाई गई।

'आपको कैसी लगी?' मुरारजी ने पूछा।

'मुझे पसंद नहीं आई,' गांधीजी ने उत्तर दिया। उन्हें बालरूम का नाच और स्त्रियों के संक्षिप्त वस्त्र पसंद नहीं आए। फिर उन्हें एक भारतीय चलचित्र रामराज्य दिखाया गया। डाक्टर लोग गांधीजी का इलाज कर रहे थे और गांधीजी मौन के द्वारा खुद अपना इलाज कर रहे थे। शुरू में उन्होंने पूर्ण मौन रखा, कुछ सप्ताह बाद वह शाम को 4 बजे से 8 बजे तक बोलने लगे। यह प्रार्थना का समय था। कुछ सप्ताह बाद वह फिर कार्य-क्षेत्र में कूद पड़े।

•

भारतीय संस्कृति की देन

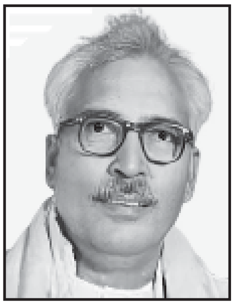

हजारी प्रसाद द्विवेदी

भारतीय संस्कृति पर कुछ कहने से पहले मैं एक निवेदन कर देना कर्त्तव्य समझता हूँ कि मैं संस्कृति को किसी देश–विशेष या जाति–विशेष की अपनी मौलिकता नहीं मानता। मेरे विचार से सारे संसार के मनुष्यों की एक सामान्य मानव–संस्कृति हो सानती है। यह दूसरी बात है कि वह व्यापक संस्कृति अब तक सारे संसार में अनुभूत और अंगीकृत नहीं हो सकी है। नाना ऐतिहासिक परम्पराओं के भीतर से गुजरकर और भौगोलिक परिस्थितियों में रहकर संसार के भिन्न–भिन्न समुदायों ने उस महान् मानवी संस्कृति के भिन्न–भिन्न पहलुओं का साक्षात्कार किया है। नाना प्रकार की धार्मिक साधनाओं, कलात्मक प्रयत्नों और सेवा, भक्ति तथा योग- मूलक अनुभूतियों के भीतर से मनुष्य उस महान् सत्य के व्यापक और परिपूर्ण रूप को क्रमशः प्राप्त करता जा रहा है, जिसे हम 'संस्कृति' शब्द द्वारा व्यक्त करते हैं। यह संस्कृति शब्द बहुत अधिक प्रचलित है तथापि इसे अस्पष्ट रूप में ही समझा जाता है। इसकी सर्वसम्मत कोई परिभाषा नहीं बन सकी है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि और संस्कारों के अनुसार इसका अर्थ समझ लेता है। फिर इसको एकदम अस्पष्ट भी नहीं कह सकते, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य जानता है कि मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति हैं। इसकी अस्पष्टता का कारण यही है कि अब भी मनुष्य इसके सम्पूर्ण और व्यापक रूप को देख नहीं सका है। संसार के सभी महान् तत्त्व इसी प्रकार मानव–चित्त में अस्पष्ट रूप से आभासित होते हैं। उनका आभासित होना ही उनकी सत्ता का प्रमाण है। मनुष्य की श्रेष्ठतर मान्यताएँ केवल अनुभूत होकर ही अपनी महिमा सूचित करती हैं। उनको स्पष्ट और सुव्यवस्थित परिभाषा में बाँधना सब समय सम्भव नहीं होता। केवल 'नेति–नेति' कहकर ही मनुष्य ने उस अनुभूति को प्रकाशित किया है। अपनी चरम सत्यानुभूति को प्रकट करते समय कबीरदास ने इसी प्रकार की विवशता का अनुभव करते हुए कहा था–'ऐसा लो नहिं तैसा लो, मैं केहि विधि कहों अनूठा लो!' मनुष्य की सामान्य संस्कृति भी बहुत कुछ ऐसी ही अनूठी वस्तु है। मनुष्य ने उसे अभी तक सम्पूर्ण पाया नहीं है, पर उसे पाने के लिए व्यग्र भाव से उद्योग कर रहा है। यह मार–काट, नोंच–खसोट और झगड़ा–टण्टा भी उसी प्रयत्न के अंग हैं। आपको यह बात बहुत विरोधाभास–सी लगेगी, पर है

नाना ऐतिहासिक परम्पराओं के भीतर से गुजरकर और भौगोलिक परिस्थितियों में रहकर संसार के भिन्न–भिन्न समुदायों ने उस महान् मानवी संस्कृति के भिन्न–भिन्न पहलुओं का साक्षात्कार किया है। नाना प्रकार की धार्मिक साधनाओं, कलात्मक प्रयत्नों और सेवा, भक्ति तथा योग– मूलक अनुभूतियों के भीतर से मनुष्य उस महान् सत्य के व्यापक और परिपूर्ण रूप को...

सत्य। रास्ता खोजते समय भटक जाना, थक जाना या झुंझला पड़ना, इस बात के सबूत नहीं हैं कि रास्ता खोजने की इच्छा ही नहीं है। कविवर रवीन्द्रनाथ ने अपनी कविजनोचित भाषा में इस बात को इस प्रकार कहा है कि 'यह जो लुहार की दूकान की खटाखट और धूल-धक्कड़ है, इनसे घबराने की जरूरत नहीं है। वहाँ वीणा के तार तैयार हो रहे हैं! जब ये तार बन जायेंगे तो एक दिन इनकी मधुर संगीत-ध्वनि से निश्चय ही मन और प्राण तृप्त हो जायेंगे। ये युद्ध-विग्रह, ये कूटनीतिक दाँव-पेंच, ये दमन और शोषण के साधन, ये सब एक दिन समाप्त हो जायेंगे। मनुष्य दिन-दिन अपने महान् लक्ष्य के नजदीक पहुँचता जायेगा।' सामान्य मानव-संस्कृति ऐसा ही दुर्लभ लक्ष्य है। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक देश और जाति ने अपनी ऐतिहासिक परम्पराओं और भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार उस महान् लक्ष्य के किसी-न-किसी पहलू का अवश्य साक्षात्कार किया है। ज्यों-ज्यों वैज्ञानिक साधनों के परिणाम-स्वरूप भिन्न-भिन्न देश और भिन्न-भिन्न जातियाँ एक-दूसरे के नजदीक आती जायेंगी, त्यों-त्यों इन अंश-सत्यों की सार्थकता प्रकट होती जायगी और हम सामान्य व्यापक सत्य को पाते जायेंगे। आज की मारा-मारी इसमें थोड़ी रुकावट डाल सकती है, पर इस प्रयत्न को निःशेष भाव से समाप्त नहीं कर सकती। अपने इस विश्वास का कारण मैं आगे बताने का प्रयत्न करूँगा।

कविवर रवीन्द्रनाथ ने अपनी कविजनोचित भाषा में इस बात को इस प्रकार कहा है कि 'यह जो लुहार की दूकान की खटाखट और धूल-धक्कड़ है, इनसे घबराने की जरूरत नहीं है। वहाँ वीणा के तार तैयार हो रहे हैं! जब ये तार बन जायेंगे तो एक दिन इनकी मधुर संगीत-ध्वनि से निश्चय ही मन और प्राण तृप्त हो जायेंगे। ये युद्ध-विग्रह, ये कूटनीतिक दाँव-पेंच, ये दमन और शोषण के साधन,...

जो आदमी ऐसा विश्वास करता है, उससे संस्कृति के साथ 'भारतीय' विशेषण जोड़ने का अर्थ पूछना नितान्त संगत है! क्या 'भारतीय' से मतलब भारतवर्ष के समस्त अच्छे-बुरे प्रयत्न और संस्कार हैं? नहीं, समस्त भारतीय संस्कार अच्छे ही हैं या मनुष्य की सर्वोत्तम साधना की ओर अग्रसर करनेवाले ही हैं, ऐसा मैं नहीं मानता। ऐसा देखा गया है कि एक जाति ने जिस बात को अपना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संस्कार माना है, वह दूसरी जाति की सर्वोत्तम साधना के साथ मेल नहीं खाता। ऐसा भी हो सकता है कि एक जाति के संस्कार दूसरी जाति के संस्कार के एकदम उलटे पड़ते हों। हो सकता है कि एक जाति मन्दिरों और मूर्त्तियों के निर्माण में ही अपनी कृतार्थता मानती हो और यह भी हो सकता है कि दूसरी जाति उनको तोड़ डालने को ही अपनी चरम सार्थकता मानती हो। ये दोनों परस्पर-विरुद्ध हैं। ऐसे स्थलों पर विचार करने की आवश्यकता होगी। श्रेष्ठ लक्ष्य परस्पर-विरोधी नहीं होता। प्रसिद्ध सन्त रज्जबदास ने कहा था- 'सब साँच मिलै सो साँच है, ना मिलै सो झूठ।' सम्पूर्ण सत्य अविरोधी होता है। जहाँ भी विरोध दीखे, वहाँ सोचने की जरूरत होगी। हो सकता है कि दो भिन्न-भिन्न जन-समुदाय मोहवश दो असत्य बातों को ही बड़ा सत्य मान बैठे हों। हो सकता है कि दोनों में एक सही हो और दूसरा गलत। साथ ही, यह भी हो सकता है कि दोनों सही रास्ते पर हों; पर उनके दृष्टिकोण गलत हों। यदि हमें अपनी गलती मालूम हो तो उसे निर्मम भाव से छोड़ देना होगा। महाभारत ने बहुत पहले घोषणा की थी कि जो धर्म दूसरे धर्म को बाधित करता है, वह धर्म नहीं है, कुधर्म है। सच्चा धर्म अविरोधी होता है:

धर्मो यो बाधते धर्म न स धर्मो कुधर्म तत्।
अविरोधी तु यो धर्मः स धर्मो मुनिसत्तम॥

मैं जब 'भारतीय' विशेषण जोड़कर संस्कृति शब्द का प्रयोग करता हूँ, तो मैं भारतवर्ष द्वारा अधिगत और साक्षात्कृत अविरोधी धर्म की ही बात करता हूँ। अपनी विशेष भौगोलिक परिस्थिति में और विशेष ऐतिहासिक परम्परा के भीतर से मनुष्य के सर्वोत्तम को प्रकाशित करने के लिए इस देश के लोगों ने भी कुछ प्रयत्न किये हैं। जितने अंश में वह प्रयत्न संसार के अन्य मनुष्यों के प्रयत्नों का अविरोधी है, उतने अंश में वह उनका पूरक भी है। भिन्न-भिन्न देशों और भिन्न-भिन्न जातियों के अनुभूत और साक्षात्कृत अन्य अविरोधी धर्मो की भाँति वह मनुष्य

की जययात्रा में सहायक है। वह मनुष्य के सर्वोत्तम को जितने अंश में प्रकाशित और अग्रसर कर सका है, उतने ही अंश में वह सार्थक और महान् है। वही भारतीय संस्कृति है, उसको प्रकट करना, उसकी व्याख्या करना या उसके प्रति जिज्ञासा-भाव उचित है। यह प्रयास अपनी बड़ाई का प्रमाणपत्र संग्रह करने के लिए नहीं है, बल्कि मनुष्य की जययात्रा में सहायता पहुँचाने के उद्देश्य से प्रेरोचित है। इसी महान् उद्देश्य के लिए उसका अध्ययन, मनन और प्रकाशन होना चाहिए।

मनुष्य की जययात्रा! क्या मनुष्य ने किसी अज्ञातशत्रु को परास्त करने के लिए अपना दुर्द्धर रथ जोता है? मनुष्य की जययात्रा ! क्या जानबूझकर लोक-चित्त को व्यामोहित करने के लिए वह पहले ही जैसा वाक्य बनाया गया है? मनुष्य की जययात्रा का क्या अर्थ हो सकता है? परन्तु मैं पाठकों को किसी प्रकार के शब्द-जाल में उलझाने का संकल्प लेकर नहीं आया हूँ। मुझे यह वाक्य सचमुच बड़ा बल देता है। न जाने किस अनादिकाल के एक अज्ञात मुहूर्त्त में यह पृथ्वी नामक ग्रहपिण्ड सूर्यमण्डल से टूटकर उसके चारों ओर चक्कर काटने लगा था। मुझे उस समय का चित्र कल्पना के नेत्रों से देखने में बड़ा आनन्द आता है। उस सद्यस्त्रुटित धरित्री-पिण्ड में ज्वलन्त गैस भरे हुए थे। कोई नहीं जानता कि इन असंख्य अग्निगर्भकणों में से किसमें या किनमें जीवतत्त्व का अंकुर वर्तमान था। शायद वह सर्वत्र परिव्याप्त था। इसके बाद लाखों वर्ष तक धरती ठण्डी होती रही, लाखों वर्ष तक उस पर तरलतप्त धातुओं की लहाछेह वर्षा होती रही, लाखों वर्ष तक उसके भीतर और बाहर प्रलयकाण्ड मचा रहा, पृथ्वी अन्यान्य ग्रहों के साथ सूर्य के चारों ओर उसी प्रकार नाचती रही, जिस प्रकार खिलाड़ी के इशारे पर सरकस के घोड़े नाचते रहते हैं। जीवतत्त्व स्थिर-अविक्षुब्ध भाव से उचित अवसर की प्रतीक्षा में बैठा रहा। अवसर आने पर उसने समस्त जड़शक्ति के विरुद्ध विद्रोह करके सिर उठाया नगण्य तृणांकुर के रूप में ! तब से आज तक सम्पूर्ण जड़शक्ति अपने आकर्षण का समूचा वेग लगाकर भी उसे नीचे की ओर नहीं खींच सकी। सृष्टि के इतिहास में यह एकदम अघटित घटना थी। अब तक महाकर्ष (ग्रेविटेशन पावर) के विराट् वेग को रोकने में कोई समर्थ नहीं हो सकता था। जीवतत्त्व प्रथम बार अपनी ऊर्ध्वगामिनी वृत्ति की अदना ताकत के बल पर इस महाकर्ष को अस्वीकार कर सका। तब से वह निरन्तर अग्रसर होता गया। मनुष्य उसी की अन्तिम परिणति है। वह एक कोश से अनेक कोशों के जटिल संघटन में कर्मेन्द्रियों से ज्ञानेन्द्रियों की और ज्ञानेन्द्रियों से मन और बुद्धि की तरफ विकसित होता हुआ मानवात्मा के रूप में प्रकट हुआ। पण्डितों ने देखा है कि मनुष्य तक आते-आते प्रकृति ने अपने कारखाने में असंख्य प्रयोग किये हैं। पुराने जन्तुओं की विशाल ठठरियाँ आज भी यत्रतत्र मिल जाती हैं और उन असंख्य प्रयोगों की गवाही दे जाती हैं। प्रकृति अपने प्रयोग में कृपण कभी नहीं रही है। उसने बरबादी की कभी परवा नहीं की। दस वृक्षों के लिए वह दस लाख बीज बनाने में कभी कोताही नहीं करती। यह सब क्या व्यर्थ की अन्धता है, सुस्पष्ट योजना का अभाव है या हिसाब न जानने का दुष्परिणाम है? कौन बताये कि किस महान् उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रकृति ने इतनी बरबादी सही है? हम केवल इतना ही जानते हैं कि जब जीवतत्त्व समस्त-विघ्न-बाधाओं को अतिक्रम करके मनुष्यरूप में अभिव्यक्त हुआ, तब इतिहास ही बदल गया। जो कुछ जैसा होना है, वह होकर ही रहेगा-यही प्रकृति का अचल विधान है। कार्य कारण बनता है और नये कार्य को जन्म देता है। कार्य कारणों की इस नीरन्ध्र ठोस परम्परा में इच्छा का कोई स्थान नहीं था। जो जैसा होने को है, वह होकर ही रहेगा। इसी समय मनुष्य आया। उसने इस साधारण नियम को अस्वीकार किया। उसने अपनी इच्छा के लिए न जाने कहाँ से एक फाँक निकाला। जो जैसा है, वैसा ही मान लेने की

मनुष्य की जययात्रा! क्या मनुष्य ने किसी अज्ञातशत्रु को परास्त करने के लिए अपना दुर्द्धर रथ जोता है? मनुष्य की जययात्रा ! क्या जानबूझकर लोक-चित्त को व्यामोहित करने के लिए वह पहले ही जैसा वाक्य बनाया गया है? मनुष्य की जययात्रा का क्या अर्थ हो सकता है? परन्तु मैं पाठकों को किसी प्रकार के शब्द-जाल में उलझाने का संकल्प लेकर नहीं आया हूँ। मुझे यह वाक्य सचमुच बड़ा बल देता है।

विवशता को उसने नहीं माना; जैसा होना चाहिए, वही बड़ी बात है। इस जगह से सृष्टि का दूसरा अध्याय शुरू हुआ। एक बार कल्पना कीजिए, तरल-तप्त धातुओं के प्रचण्ड समुद्र की, निरन्तर झरनेवाले अग्नि-गर्भ मेघों की, विपुल जड़-संघात की, और फिर कल्पना कीजिए क्षुद्राकार मनुष्य की ! विराट् ब्रह्माण्ड निकाय, कोटि-कोटि नक्षत्रों का अग्निमय आवर्त्त-नृत्य, अनन्त शून्य में निरन्तर उद्भूयमान और विनाशमान नीहारिकापुंज विस्मयकारी हैं, पर उनसे अधिक विस्मयकारी है मनुष्य, जो नगण्य स्थान-काल में रहकर इनकी नाप-जोख करने निकल पड़ा है! क्या मनुष्य इस सृष्टि की अन्तिम परिणति है? क्या विधाता ने केशवदास के बलबीर की भाँति इस कृती बीज की रचना करके हाथ झाड़ लिया है-कै करतार बली बलबीर दियो करतार दुहूँ करतारी? कौन कह सकता है? परन्तु क्या यह मनुष्य की अमोघ जययात्रा नहीं है? क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि समस्त गलतियों के बावजूद मनुष्य मनुष्यता की उच्चतर अभिव्यक्तियों की ओर ही बढ़ रहा है?

यद्यपि मनुष्य-बुद्धि ने इनमें भी कमाल का उत्कर्ष दिखाया है, पर प्रयोजन प्रयोजन ही है। प्रयोजन के जो अतीत है, जहाँ मनुष्य की अनन्दिनी वृत्ति ही चरितार्थ होती है, वहाँ मनुष्य की ऊर्ध्वगामिनी वृत्ति को सन्तोष होता है। ज्यों-ज्यों मनुष्य संघबद्ध होकर रहने का अभ्यस्त होता गया, त्यों-त्यों उसे सामाजिक संघटन के लिए नाना प्रकार के नियम- कानून बनाने पड़े।

यह जो स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होना है, जो कुछ जैसा होनेवाला है, उसको वैसा ही न मानकर जैसा होना चाहिए, उसकी ओर जाने का प्रयत्न है, यही मनुष्य की मनुष्यता है ! अनेक बातों में मनुष्य और पशु में कोई भेद नहीं है। मनुष्य पशु की अवस्था से ही अग्रसर होकर इस अवस्था में आया है। इसलिए वह स्थूल को छोड़कर रह नहीं सकता। यही कारण है कि मनुष्य को दो प्रकार के कर्त्तव्य निबाहने पड़ते हैं, एक स्थूल की क्षुधा को निवृत्त करना और दूसरा सूक्ष्म से सूक्ष्मतर तत्त्व की ओर बढ़ानेवाली अपनी ऊर्ध्वगामिनी वृत्ति को सन्तुष्ट करना। आहार-निद्रा आदि के साधन भी मनुष्य को जुटाने पड़ते हैं। यद्यपि मनुष्य-बुद्धि ने इनमें भी कमाल का उत्कर्ष दिखाया है, पर प्रयोजन प्रयोजन ही है। प्रयोजन के जो अतीत है, जहाँ मनुष्य की अनन्दिनी वृत्ति ही चरितार्थ होती है, वहाँ मनुष्य की ऊर्ध्वगामिनी वृत्ति को सन्तोष होता है। ज्यों-ज्यों मनुष्य संघबद्ध होकर रहने का अभ्यस्त होता गया, त्यों-त्यों उसे सामाजिक संघटन के लिए नाना प्रकार के नियम-कानून बनाने पड़े। इस संघटन को दोषहीन और गतिशील बनाने के लिए उसने दण्ड-पुरस्कार की व्यवस्था भी की। इन बातों को एक शब्द में सभ्यता कहते हैं। आर्थिक व्यवस्था, राजनैतिक संघटन, नैतिक परम्परा और सौन्दर्य-बोध को तीव्रतर करने की योजना-ये सभ्यता के चार स्तम्भ हैं। इन सबके सम्मिलित प्रभाव से संस्कृति बनती है। सभ्यता मनुष्य के बाह्य प्रयोजनों को सहजलभ्य करने का विधान है और संस्कृति प्रयोजनातीत अन्तर आनन्द की अभिव्यक्ति । परन्तु शायद फिर मैं पहेलियों की बोली बोलने लगा हूँ। आप जानना चाहेंगे कि यह बाह्य प्रयोजन और आन्तर अभिव्यक्ति क्या बला है? किसको तुम बाह्य कहते हो और किसको आन्तर, तुम्हारे कथन में प्रमाण क्या है?

यह जो हमारे बाह्यकरण हैं- कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय हैं- हमारे अत्यन्त स्थूल प्रयोजनों के निवर्त्तक हैं। मन इनसे सूक्ष्म है, बुद्धि और भी सूक्ष्म है। मन में हम हजार गज की लम्बाई की भी एकाएक धारणा नहीं कर सकते। पर बुद्धि द्वारा ज्योतिषी कोटि-कोटि प्रकाश-वर्षों में फैले हुए ग्रह-नक्षत्रों की नाप-जोख किया करते हैं। परन्तु बुद्धि भी बड़ी चीज नहीं है। बुद्धि से भी बढ़कर कोई वस्तु है। वही अन्तरतम है। गीता में कहा है:

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिद्रियेभ्य: परं मन: ।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धे: परतस्तु स: ।।

जो वस्तु केवल इन्द्रियों को सन्तुष्ट कर सके, वह बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है। जो वस्तु मन को सन्तुष्ट कर सके, अर्थात् हमारे भावावेगों को सन्तोष दे सके, वह पहली से सूक्ष्म होने पर भी बहुत बड़ी नहीं है। जो बात बुद्धि को सन्तोष दे सके, वह जरूर बड़ी है, पर वह भी बाह्य है। बुद्धि से भी परे कुछ है। वही वास्तव है, उसका सन्तोष ही काम्य है! परन्तु वह क्या है? मैं भारतीय मनीषा से इस मन्तव्य तक आपको ले आकर यह आशा नहीं कर रहा हूँ

कि आप शास्त्र-वाक्य पर विश्वास कर लें। मैं इसके निकट आपको ले आकर छोड़ देता हूँ; क्योंकि मैं जानता हूँ कि यहाँ तक आकर आप इसकी गहराई में पैठने का प्रयत्न अवश्य करेंगे। जब तक इसकी गहराई में पैठने का प्रयत्न नहीं किया जाता, तब तक मनुष्य के बड़े-बड़े प्रयत्नों का रहस्य समझ में नहीं आयेगा ।

'तैत्तिरीय उपनिषद्' की भृगुवल्ली में वरुण के पुत्र भृगु की मनोरंजक कथा दी हुई है। भृगु ने जाकर वरुण से कहा था कि 'भगवन्, मैं ब्रह्म को जानना चाहता हूँ।' पिता ने तप करने की आज्ञा दी। कठिन तपस्या के बाद पुत्र ने समझा-अन्न ही ब्रह्म है। पिता ने फिर तप करने को कहा। इस बार पुत्र कुछ और गहराई में गया । उसने प्राण को ही ब्रह्म समझा। पिता को सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने पुत्र को पुनःतप करने के लिए उत्साहित किया। पुत्र ने फिर तप किया और समझा कि मन ही ब्रह्म है। पिता फिर भी असन्तुष्ट ही रहे। फिर तप करने के बाद पुत्र ने अनुभव किया-विज्ञान ही ब्रह्म है। पर पिता को अब भी सन्तोष नहीं हुआ। पुनर्वार कठिन तप के बाद पुत्र ने समझा-आनन्द ही ब्रह्म है। यही चरम सत्य था। इस प्रकार अन्न (भौतिक पदार्थ)-प्राण-मन-विज्ञान-(बुद्धि)-आनन्द(अध्यात्म तत्त्व)- ये ही ज्ञान के पाँच स्तर हैं। ये उत्तरोत्तर सूक्ष्म हैं।

इन्हीं पाँचों को आश्रय करके संसार के भिन्न-भिन्न दार्शनिक मत बने हैं। साधारणतः इनको आश्रय करके दो-दो प्रकार के मत बन जाते हैं। तर्काश्रित मत और विश्वास-सर्मापत मत। सन्देह को उद्रिक्त करनेवाला तर्काश्रित मत फिलासफी का प्रतिपाद्य मत बन गया है और विश्वास को आश्रय करके श्रद्धा को उद्रिक्त करने-वाला मत धर्म-विज्ञान का। भारतवर्ष का इतिहास अन्य देशों से कुछ विचित्र रहा है। सभ्यता के उषःकाल से लेकर आधुनिक काल के आरम्भ तक हमारे इस देश में नाना मानव-समूहों की धारा बराबर आती रही है। इसमें सभ्य, अर्ध-सभ्य और बर्बर श्रेणी के मनुष्य रहे हैं। भारतीय मनीषी शुरू से ही मनुष्य के बहुविध विश्वासों और मतों को जानने का अवसर पा सके हैं। इसीलिए यहाँ धर्म-विज्ञान और तत्त्व-जिज्ञासा कभी परस्पर-विरोधी मत नहीं माने गये। भारतीय ऋषि ने दोनों का उचित सामंजस्य किया है। शायद इस विषय में भारतवर्ष सारे संसार को कुछ दे सकता है। भारतवर्ष के दार्शनिक साहित्य के आलोचकों को आश्चर्य हुआ है कि इस देश में उस चीज का कभी विकास ही नहीं हो पाया जिसे 'फिलासफी' कहते हैं; भारतवर्ष के दर्शन धर्म पर आधारित बताये गये हैं। 'दर्शन' शब्द का अर्थ ही देखना है। इसका अन्तर्निहित अर्थ यह है कि 'दर्शन' कुछ सिद्ध महात्माओं के देखे हुए (साक्षात्कृत) सत्यों का प्रतिपादन करते हैं। जैसा कि हमने अभी लक्ष्य किया है, यह 'देखना' तब वास्तविक होगा जब वह केवल इन्द्रिय द्वारा, प्राण द्वारा, मन द्वारा यहाँ तक कि बुद्धि द्वारा भी दृष्ट स्थूल तथ्यों को पीछे छोड़कर उस वस्तु के द्वारा देखा गया हो, जो आनन्द रूप है, जो सबके परे और सबसे सूक्ष्म है।

'तैत्तिरीय उपनिषद्' की भृगुवल्ली में वरुण के पुत्र भृगु की मनोरंजक कथा दी हुई है। भृगु ने जाकर वरुण से कहा था कि 'भगवन्, मैं ब्रह्म को जानना चाहता हूँ।' पिता ने तप करने की आज्ञा दी। कठिन तपस्या के बाद पुत्र ने समझा-अन्न ही ब्रह्म है। पिता ने फिर तप करने को कहा। इस बार पुत्र कुछ और गहराई में गया ।

यही स्वसंवेद्य ज्ञान है। परन्तु यह नहीं समझना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति जो अनुभव करता है, वह सत्य ही है। शरीर और मन की शुद्धि आवश्यक है। जब तक मनुष्य का बाहर और भीतर शुद्ध, निर्मल और पवित्र नहीं होते, तब तक वह गलत वस्तु को सत्य समझ सकता है। चंचल मन से कोई मामूली समस्या भी ठीक-ठीक समाहित नहीं होती। यह जो बाह्य और अन्तःकरणों की शुद्धि है, यही भारतीय दर्शनों की विशेषता है। जैसे-तैसे रहकर, जैसा-तैसा सोचकर बड़े सत्य को अनुभव नहीं किया जा सकता। चंचल चित्त केवल विकृत चिन्ता में ही लगा रहता है। भारतीय मनीषियों ने इस चंचल चित्त को वश में करने के उपाय बताये हैं। इसी उपाय का नाम योग है। भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि यद्यपि मन बड़ा चंचल है और उसे वश में करना कठिन है तथापि अभ्यास और वैराग्य से उसे वश में किया जा सकता है। अभ्यास और वैराग्य के लिए भारतीय साहित्य में शताधिक ग्रन्थ वर्त्तमान हैं; सम्भवतः सारे संसार में बुद्धिजीवी इस विषय में यहाँ से कुछ सीख सकते हैं। केवल बौद्धिक

विश्लेषण द्वारा सत्य तक नहीं पहुँचा जा सकता। सर्वत्र अभ्यास और वैराग्य आवश्यक है।

हमने अभी जिन पाँच तत्त्वों को लक्ष्य किया, उनमें सबसे स्थूल है यह शरीर, फिर प्राण और फिर मन । शरीर का प्रतीक बिन्दु है। भारतीय मनीषियों ने अनुभव किया है कि इनमें से किसी एक को संयत करने का अभ्यास किया जाय तो बाकी संयत हो जाते हैं। भारतवर्ष के नाना आध्यात्मिक पन्थ इन तीनों को संयत करने के ऊपर जोर देने के कारण अलग-अलग हो गये हैं। संयमन की विधि भी सर्वत्र एक नहीं है। नाना बौद्ध और शाक्त साधनाओं में बिन्दु को वश में करने की विधियाँ बतायी गयी हैं, हठयोग प्राण को वश करने के पक्ष में है, राजयोग मन को वश में करने की विधि बताता है। ये सब अभ्यास द्वारा सिद्ध होते हैं। ऊपर-ऊपर से देखनेवाले आलोचक भारतीय साधन-मार्गो में इतना अधिक भेद देखते हैं कि उन्हें समझ में नहीं आता कि ये विभिन्न पन्थ किस प्रकार अपने को एक ही मूल उद्गम से उद्भूत बताते हैं। गहराई में जानेवाले के लिए ये विरोध नगण्य हैं। नाना भाँति अभ्यास के द्वारा साधक बिन्दु, प्राण और मन को स्थिर करता है, तब जाकर अन्तःकरण निर्मल स्फटिक मणि के समान होता है। परन्तु यहाँ भी भ्रान्ति का अवकाश रहता है। इसीलिए भारतीय मनीषियों ने केवल अभ्यास को ही एकमात्र साधन नहीं माना। अभ्यास के साथ वैराग्य होना चाहिए। राग-द्वेष वश जो इन्द्रिय-चांचल्य होता है, उसको रोकना, राग और विराग के विषयों को अलग-अलग समझ सकना, मन द्वारा विषयों की चिन्ता और अन्त में मानसिक उत्सुकता को दवा देना- ये सब वैराग्य के भेद हैं, परन्तु असली वैराग्य तो तब होता है जब अन्तरात्मा समस्त इन्द्रियों से और मनबुद्धि आदि सब तत्त्वों से अपने को पृथक् समझ लेता है। इस प्रकार अभ्यास और वैराग्य से चित्त स्थिर होता है और बुद्धि निर्मल होती है-केवल उसी समय परम सत्य का साक्षात्कार होता है।

मेरा अनुमान है कि विचार का यह प्रकृष्ट पन्थ है, परन्तु यह मेरा दावा नहीं है कि मैं इस बात को ठीक-ठीक समझ सकता हूँ। वस्तुतः यह साधना का विषय है, परन्तु यह समझना कठिन नहीं कि किसी बात की सचाई तक पहुँचने के लिए एक प्रकार के बौद्धिक वैराग्य की आवश्यकता है। संसार की समस्त जटिल समस्याएँ नित्य-प्रति और भी जटिलतर इसलिए होती जाती हैं कि इन पर विचार करनेवालों में मानसिक संयम और बौद्धिक वैराग्य का अभाव है। लोग अपने-अपने विशेष स्वार्थों और विचार-पद्धतियों के भीतर से दूसरों को देखने का प्रयास करते हैं और समस्याएँ और जटिलतर हो जाती हैं। बौद्धिक वैराग्य ही मनुष्य को संस्कृत बनाता है।

भारतवर्ष का साहित्य बड़ा विशाल और विपुल है। उसने ज्ञान और साधना के क्षेत्र में नाना भाव से विचार किया है। मैं सबकी चर्चा करने योग्य अधिकारी भी नहीं हूँ और यहाँ इतना समय भी नहीं है। परन्तु इतना स्मरण कर लेना उचित है कि यह जो आध्यात्मिक परमसत्य की उपलब्धि है और जिसके लिए शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक संयम और वैराग्य की बात बतायी गयी है सिर्फ यही एकमात्र काम्य नहीं बताया गया। यद्यपि यह परमोत्तम लक्ष्य है, पर इस लक्ष्य की पूर्ति के पहले प्रत्येक व्यक्ति को कुछ ऋण चुका लेने पड़ते हैं। बहुत थोड़े लोगों को इन ऋणों से छुटकारा दिया गया है। अधिकांश लोग इन ऋणों को चुकाये बिना किसी भी बड़ी साधना के अधिकारी नहीं हो सकते ।

भारतीय विश्वास के अनुसार मनुष्य तीन प्रकार के ऋणों को लेकर पैदा होता है। ये तीन ऋण हैं- देवऋण, ऋषिऋण और पितृऋण। पैदा होते ही मनुष्य अपने सम्पूर्ण शरीर और इन्द्रियों को पा जाता है। ये इन्द्रियाँ उसे न मिलतीं तो न तो वह संसार का कुछ आनन्द ही उपभोग कर सकता, न कुछ नया दे ही सकता । निश्चय ही वह माता-पिता के निकट इसके लिए ऋणी है। परन्तु वस्तुतः वह अनादिकालीन धारा का परिणाम पितृ-पितामहों ने उसे जो शरीर दिया है, उसका क्या कोई प्रतिदान दे सकता है ? भारतीय मनीषियों ने इसका एकमात्र उपाय यह बताया है कि मनुष्य इसे ऋण के रूप में स्वीकार कर लें और पितृ-पितामहों की इस धारा को आगे बढ़ा दे। धारा रुद्ध न होने पाये। कौन जानता है, भविष्य में उसी धारा में कौन कृती बालक पैदा होकर संसार को नयी रोशनी दे? इसीलिए शास्त्रकारों ने पितृऋण से मुक्ति पाने का उपाय सन्तान उत्पन्न करना और उन्हें शिक्षित बनाकर समाज के हाथों सौंप जाने को बताया है। फिर मनुष्य पैदा होते ही अनेक

विद्वानों और विज्ञानियों की आविष्कृत ज्ञानराशि को सहज ही पा जाता है। हर व्यक्ति को नये सिरे से अगर अपना-अपना प्रयोग और आविष्कार चलाना पड़ता तो मनुष्य की यह दुनिया कैसी बन गयी होती, यह केवल सोचने की बात है। सो, मनुष्य इस प्रकार अतीत के ऋषियों का ऋण लिये हुए पैदा होता है। इसे चुकाने का उपाय ज्ञान की धरा की रक्षा और उसे अग्रसर कर देना है। विद्या पढ़ना और ज्ञानधारा को अग्रसर करना कोई कृतित्व नहीं, सिर्फ कर्जा चुकाने का कर्त्तव्य-पालन-मात्र है। फिर अन्न को पैदा करने वाली पृथ्वी, जल बरसाने वाले मेघ, प्रकाश देनेवाला सूर्य आदि प्राकृतिक शक्तियाँ जिन्हें भारतीय मनीषी 'देवता' कहता है- हमें अनायास मिल गयी हैं। भारतीय मनीषी ने इनके ऋण से मुक्ति पाने का उपाय बाँटकर भोग करना बताया है। जो तुम्हारे पास है, सबको बाँटकर ग्रहण करो। सो, ये तीन ऋण मनुष्य के जन्म से ही लदे आते हैं। इन तीनों ऋणों को चुकाये बिना मोक्ष पाने का प्रयत्न पाप है। भारतवर्ष में प्रत्येक व्यक्ति से यह कम-से-कम आशा की गयी है कि वह समाज को स्वस्थ और शिक्षित सन्तान दे, प्राचीन ज्ञान-परम्परा की रक्षा करे और उसे आगे बढ़ाने का प्रयत्न करे और प्राकृतिक शक्तियों से प्राप्त सम्पद् को निजी समझकर दबा न रखे। ये ऋण हैं। 'मनु-स्मृति' के छठवें अध्याय में कहा गया है कि जो इनको चुकाये बिना ही मोक्ष की कामना करता है, वह अध:पतित होता है:

ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत् ।

अनपाकृत्य मोक्षन्तु सेवमानो व्रजत्यध: ।

जब तक ये ऋण चुका नहीं दिये जाते, तब तक मनुष्य को बड़ी बात सोचने का अधिकार नहीं है। भारतवर्ष ने एशिया और यूरोप के देशों को अपनी धर्म-साधना की उत्तम वस्तुएँ दान दी हैं। उसने अहिंसा और मैत्री का सन्देश दिया है, क्षुद्र दुनियावी स्वार्थों की उपेक्षा करके विशाल आध्यात्मिक अनुभूतियों का उपदेश दिया है और उससे जिन बातों को ग्रहण किया है वे भी उसी प्रकार महान् और दीर्घस्थायी रही है।

उच्चतर क्षेत्र के आदान-प्रदान के ठोस चिन्ह अब भी इस भूमि के नीचे से निकलते रहते हैं और विदेशों में मिल जाया करते हैं। हमारा धर्मविज्ञान, हमारा मूर्त्ति और मन्दिर-शिल्प, हमारा दर्शन-शास्त्र, हमारे काव्य और नाटक, हमारी चिकित्सा और ज्योतिष संसार में गये हैं, सम्मानित और स्वीकृत हुए हैं और संसार की उच्च चिन्ताशील जातियों से थोड़ा-बहुत प्रभावित भी हुए हैं। मैं आज आपको उस दिव्य लोक की सैर नहीं करा सकता जहाँ भारतीय आचार्य पर्वतों और रेगिस्तानों को लांघकर हिंसा और मैत्री का सन्देश देते हैं, जहाँ हमारे शिल्पी गान्धार और यवन कलाकारों के साथ मिलकर पत्थर में जान डाल रहे हैं, जहाँ अरब और ईरान के मनीषियों के साथ मिलकर वे चिकित्सा और ज्योतिष का प्रचार कर रहे हैं, जहाँ मलय और यवद्वीप में वहाँ के निवासियों से मिलकर शिल्प और कला में नया प्राण संचार कर रहे हैं। मैं उस परम मोहक लोक में आपको न ले जाकर शास्त्रीय नीरस विचारों में उलझाये रहा; परन्तु इसके लिए मुझे क्षमा माँगने की जरूरत नहीं है, क्योंकि मेरा विश्वास है कि भारतीय मनीषियों ने अपने देशवासियों में जीवन के आवश्यक कर्त्तव्यों, संयम और वैराग्य की महिमा और स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म की ओर झुकने का जो प्रेम पैदा किया उसका ही परिणाम है कि भारतवर्ष दीर्घकाल तक पशुसुलभ क्षुद्र स्वार्थों का गुलाम नहीं बन सका। आज हम सांस्कृतिक दृष्टि से जो बहुत नीचे गिर गये हैं, उसका प्रधान कारण यही है कि हम इस महान् आदर्श को भूल गये हैं। मेरा विश्वास है कि इन आदर्शों को नयी परिस्थितियों के अनुकूल बनाकर ग्रहण करने से हम तो ऊपर उठेंगे ही, सारे संसार को भी उसमें कुछ-न-कुछ ऐसा अवश्य मिलेगा, जिससे उसे वर्त्तमान प्रलयंकर अवस्था से उबरने का मौका मिले ।

भारतवर्ष ने सामान्य मानवीय संस्कृति को पूर्ण और व्यापक बनाने की जो महती साधना की है, उसके प्रत्येक पहलू का अध्ययन और प्रकाशन हमारा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य होना चाहिए ।

[बिहार प्रान्तीय संस्कृति सम्मेलन, मन्दार, भागलपुर में दिया हुआ भाषण – अशोक के फूल से]

अगस्त क्रांति में महात्मा गांधी का अवदान

आचार्य राघवेन्द्र पी तिवारी

भारतीय जनमानस के लिए यह कटु सत्य है कि अंग्रेजों ने उन पर लगभग 200 वर्षों तक शासन किया। एक मानवतावादी एवं प्रकृति-केन्द्रित जीती-जागती संस्कृति में अनैतिक हस्तक्षेप किया और उसे छिन्न-भिन्न कर दिया। अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षा प्रणाली को बदलकर अंग्रेजी माध्यम को प्राथमिकता दी, जिससे पारंपरिक भारतीय शिक्षा और ज्ञान प्रणालियाँ कमजोर हो गईं। अंग्रेजी भाषा के प्रसार के कारण स्थानीय भाषाएँ और साहित्यिक परंपराएँ उपेक्षित हो गईं। कई प्राचीन ग्रंथ और साहित्यिक कृतियाँ अनुवाद और संरक्षण के अभाव में खो गईं। अंग्रेजों ने भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं में हस्तक्षेप किया और कई स्थानों पर उनके पालन पर प्रतिबंध लगाया, जिससे सांस्कृतिक पहचान को क्षति पहुँची। उनकी आर्थिक नीतियों ने भारत की पारंपरिक आर्थिक संरचनाओं को तोड़ा जिससे हस्तशिल्प और लघु उद्योगों का पतन हुआ। इससे संबंधित सांस्कृतिक परंपराएँ भी प्रभावित हुईं। औपनिवेशिक शासन की विभाजनकारी नीतियों (जैसे 'फूट डालो और राज करो') ने भारतीय समाज को विभाजित किया और सामाजिक संरचनाओं को कमजोर किया। उन्होंने भारत के प्राकृतिक संसाधनों का भी व्यापक दोहन किया, जिससे पर्यावरणीय और सांस्कृतिक धरोहरों को नुकसान पहुँचा। पश्चिमी विचारधाराओं और जीवनशैली के प्रसार ने भारतीय नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों को प्रभावित किया, जिससे पारंपरिक जीवनशैली में बदलाव आया।

लेकिन उनकी सत्ता को स्थापित होने से लेकर उखड़ जाने तक निरंतर चुनौती भी मिलती रही। बीसवीं सदी के दूसरे दशक में महात्मा गांधी ने भी भारत लौटते ही एक के बाद एक आंदोलनों की शुरुआत कर दी। इसकी शुरुआत उनके अफ्रीका कालखंड में हुई थी। महात्मा गांधी ने अपने जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा दक्षिण अफ्रीका में बिताया, जहाँ उन्होंने रंगभेद (अपार्थीड) के खिलाफ संघर्ष किया। 1893 में जब वे एक भारतीय व्यापारी के कानूनी मामले के सिलसिले में दक्षिण अफ्रीका गए तो उन्हें वहाँ भारतीयों और अन्य गैर-श्वेत लोगों के प्रति भेदभाव का सामना करना पड़ा। एक बार उन्हें ट्रेन के प्रथम श्रेणी के डिब्बे से केवल उनकी त्वचा के रंग के कारण बाहर फेंक दिया गया।

अंग्रेजी भाषा के प्रसार के कारण स्थानीय भाषाएँ और साहित्यिक परंपराएँ उपेक्षित हो गईं। कई प्राचीन ग्रंथ और साहित्यिक कृतियाँ अनुवाद और संरक्षण के अभाव में खो गईं। अंग्रेजों ने भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं में हस्तक्षेप किया और कई स्थानों पर उनके पालन पर प्रतिबंध लगाया, जिससे सांस्कृतिक पहचान को क्षति पहुँची।

इस अनुभव ने गांधी जी को दक्षिण अफ्रीका में भारतीय समुदाय के अधिकारों के लिए लड़ने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने सत्याग्रह का प्रयोग करके भारतीयों के प्रति भेदभावपूर्ण कानूनों के खिलाफ आंदोलन शुरू किया। इस संघर्ष के दौरान, गांधी जी ने 'फीनिक्स फार्म' और 'टॉल्सटॉय फार्म' जैसे आश्रमों की स्थापना की, जहाँ उन्होंने अपने अनुयायियों के साथ आत्मनिर्भरता और सामूहिक जीवन के सिद्धांतों का अभ्यास किया। दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी के अनुभवों का उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। यहीं पर उन्होंने अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांतों को विकसित किया, जो बाद में भारत की स्वतंत्रता संग्राम में प्रमुख हथियार बने। उन्होंने भारत की सामान्य जनता को उसकी सामूहिक शक्ति का अहसास करवाया और सत्याग्रह के द्वारा विदेशी सत्ता की चूलें हिला दीं।

सन 1917 में गांधी बिहार के चंपारण गए। चंपारण जिले में नील के किसानों को ब्रिटिश प्लांटेशन मालिकों द्वारा अत्याचार और जबरन खेती के लिए मजबूर किया जा रहा था। गांधी जी ने किसानों के अधिकारों के लिए आवाज उठाई और अहिंसक प्रतिरोध के माध्यम से उनकी समस्याओं को उजागर किया। उनके नेतृत्व में किसानों ने सत्याग्रह किया और अंततः उनकी मांगें स्वीकार की गईं, जिससे उन्हें काफी राहत मिली।

इसके पश्चात 1918 में गांधी जी को गुजरात के खेड़ा जिले में बुलाया गया। खेड़ा जिले के किसान खराब फसल और अकाल के कारण आर्थिक संकट में थे और वे कर माफी की मांग कर रहे थे। गांधी जी ने किसानों के साथ मिलकर कर माफी के लिए सत्याग्रह किया। उन्होंने प्रशासन से किसानों के प्रति सहानुभूति और न्याय की मांग की। उनके अहिंसक आंदोलन के परिणामस्वरूप सरकार ने किसानों को कर में राहत प्रदान की। ये शुरुआती आंदोलन गांधी जी की अहिंसा और सत्याग्रह की नीति को भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रमुखता से स्थापित करने में महत्वपूर्ण थे। इसके बाद असहयोग आंदोलन और नमक कानून तोड़ने वाले सत्याग्रहों ने गांधी जी को देशव्यापी लोकप्रियता और स्वीकार्यता प्रदान की। 1942 आते-आते देश निर्णायक मोड़ पर था। ऐसे में महात्मा गांधी जी ने 'करो या मरो' के नारे के साथ भारत छोड़ो आंदोलन के लिए बिगुल फूंक दिया। इस आंदोलन को अगस्त क्रांति के नाम से भी इतिहास में स्मरण किया जाता है। इस आंदोलन ने किस प्रकार भारत की आजादी की नींव रखी, यह समझने के लिए हमें उस समय के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिप्रेक्ष्य का अवलोकन अवश्य करना चाहिए।

1940 के दशक की शुरुआत में दुनिया में उथल-पुथल मची हुई थी। द्वितीय विश्व युद्ध प्रारंभ हो चुका था। इधर भारत में ब्रिटिश सरकार ने बिना किसी भारतीय नेता से परामर्श किए ही भारत को युद्ध में शामिल कर लिया था। इससे भारतीय नेताओं और जनता में आक्रोश बढ़ गया। भारतीय सैनिकों को यूरोप और एशिया के विभिन्न मोर्चों पर भेजा जा रहा था, जबकि देश में भोजन, कपड़े और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कमी हो रही थी। अंग्रेजों ने भारतीयों के साथ जो व्यवहार किया, वह उन्हें दोयम दर्जे का नागरिक बनाने जैसा था। देशवासियों में अंग्रेजी सत्ता के प्रति असंतोष बढ़ता ही जा रहा था। गांधी जी और अन्य नेताओं ने कई बार ब्रिटिश सरकार से भारतीयों के अधिकारों की मांग की, लेकिन हर बार उन्हें अस्वीकार कर दिया गया।

सन् 1942 में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय नेताओं को शांत करने के लिए क्रिप्स मिशन भेजा। सर स्टैफोर्ड क्रिप्स द्वारा पेश किया गया प्रस्ताव भारतीयों को युद्ध के बाद एक संवैधानिक सभा में शामिल होने और अपने भविष्य का निर्धारण करने का अवसर प्रदान करता था। लेकिन इसमें ब्रिटिश सरकार की कई ऐसी शर्तें शामिल थीं जो भारत के हित में नहीं थी। भारतीयों की मांग पूर्ण स्वराज थी, जबकि ब्रिटिश सरकार भारत को पूर्ण स्वराज नहीं देना चाहती थी। वह भारत की सुरक्षा अपने हाथों में ही रखना चाहती थी और साथ ही गवर्नर जनरल के वीटो के अधिकार को भी बनाए रखने के पक्ष में थी। इसलिए भारतीय नेताओं ने उनके प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। ब्रिटिश सरकार की मनमानी और उनकी नीतियों से भारतीय जनता में आक्रोश बढ़ गया था। महात्मा गांधी और अन्य प्रमुख नेताओं ने महसूस किया कि अब समय आ गया है कि भारतीय जनता को स्वतंत्रता के लिए एक अंतिम और निर्णायक आंदोलन

करना चाहिए। गांधी जी ने 'करो या मरो' का नारा देकर भारतीय जनता को संघर्ष के लिए प्रेरित किया।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान देश में फैली भुखमरी, बेरोजगारी और अत्याचार ने भारतीय जनता को झकझोर कर रख दिया था। लोगों ने महसूस किया कि अब उन्हें अपनी स्वतंत्रता के लिए खुद ही संघर्ष करना होगा। महात्मा गांधी ने अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांतों पर जोर देते हुए भारतीय जनता को स्वतंत्रता संग्राम के लिए तैयार किया। उनका मानना था कि केवल सत्य और अहिंसा के माध्यम से ही ब्रिटिश सरकार को झुकाया जा सकता है।

1942 में, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने बंबई में अपनी कार्यकारिणी समिति की बैठक बुलाई। इस बैठक में गांधीजी ने 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव रखा, जो सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। 8 अगस्त 1942 को गांधीजी ने बंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में एक विशाल सभा को संबोधित किया और अंग्रेजों से भारत छोड़ने की मांग की। पुलिस की कई चेतावनियों और सरकारी प्रतिबंधों के बावजूद, अरुणा आसफ अली ने एआईसीसी के विशेष सत्र की अध्यक्षता की और 9 अगस्त को ग्वालिया टैंक मैदान में भारी भीड़ की मौजूदगी में उन्होंने गर्व से भारतीय तिरंगा फहराया। गांधी जी ने अपने भाषण में कहा कि एक छोटा सा मंत्र है जो मैं आपको देता हूँ। इसे आप अपने हृदय में अंकित कर लें और अपनी हर सांस में उसे अभिव्यक्त करें। यह मंत्र है-"करो या मरो"। अपने इस प्रयास में हम या तो स्वतंत्रता प्राप्त करेंगे या फिर जान दे देंगे। गांधी जी का यह मंत्र जल्द ही पूरे देश में गूंजने लगा। गांधी जी ने इस प्रस्ताव के माध्यम से ब्रिटिश सरकार से स्पष्ट रूप से भारत छोड़ने को कहा। इस प्रस्ताव ने भारतीय जनता में एक नई ऊर्जा और जोश भर दिया। महात्मा गांधी द्वारा दिया गया 'करो या मरो' का नारा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। अगस्त क्रांति में देशभर की जनता ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। किसान, मजदूर, छात्र, महिलाएं और विभिन्न समुदायों के लोग इस आंदोलन में शामिल हुए। यह आंदोलन शहरों से लेकर गांवों तक फैल गया। ऐसा माना जाता है कि यह भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का आखिरी सबसे बड़ा आंदोलन था, जिसमें सभी भारतवासियों ने एक साथ बड़े स्तर पर भाग लिया था। कई जगह समानांतर सरकारें भी बनाई गई, स्वतंत्रता सेनानी भूमिगत होकर भी लड़े।

अगस्त क्रांति ने राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश के रूप में भारत को दो और भविष्य द्रष्टा एवं क्रांतिकारी नेता दिये। लोहिया ने आंदोलन की रणनीति बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे महात्मा गांधी के करीबी सहयोगी थे और उन्होंने आंदोलन को एक व्यापक जनांदोलन बनाने में मदद की। उन्होंने 'गुप्त रेडियो' स्थापित किया, जिसके माध्यम से ब्रिटिश सरकार के खिलाफ प्रचार किया गया...

कुछ युवा नेताओं ने कांग्रेस रेडियो नामक भूमिगत स्टेशन के माध्यम से समाचार प्रसारित करने का काम अपने ऊपर ले लिया। डॉ. उषा मेहता द्वारा आयोजित इस रेडियो ऑपरेटर को ब्रिटिशों द्वारा पकड़े जाने से बचने के लिए अपने प्रसारण उपकरणों को लगातार बदलते रहना पड़ता था। 14 अगस्त 1942 को भारत छोड़ो आंदोलन शुरू होने के एक सप्ताह बाद डॉ. उषा मेहता द्वारा स्वयं की गई निम्नलिखित घोषणा के साथ रेडियो लाइव हो गया - 'यह कांग्रेस रेडियो है जो भारत में कहीं से 42.34 मीटर तरंगदैर्घ्य पर कॉल कर रहा है।' इसके माध्यम से अंग्रेजों की नजर में आये बिना आंदोलनकारी अपनी रणनीति साझा करने में सक्षम हुए।

अगस्त क्रांति ने राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश के रूप में भारत को दो और भविष्य द्रष्टा एवं क्रांतिकारी नेता दिये। लोहिया ने आंदोलन की रणनीति बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे महात्मा गांधी के करीबी सहयोगी थे और उन्होंने आंदोलन को एक व्यापक जनांदोलन बनाने में मदद की। उन्होंने 'गुप्त रेडियो' स्थापित किया, जिसके माध्यम से ब्रिटिश सरकार के खिलाफ प्रचार किया गया और लोगों को आंदोलन के लिए प्रेरित किया। आंदोलन के दौरान गिरफ्तार होने के बाद भी लोहिया ने जेल में भी आंदोलन को जारी रखा। उनकी गिरफ्तारी और संघर्ष ने लोगों में आंदोलन के प्रति समर्पण को और बढ़ाया। जेपी ने भी आंदोलन में एक प्रमुख क्रांतिकारी नेता के रूप में भूमिका निभाई। जेपी ने गुप्त संगठनों के माध्यम से आंदोलन को संगठित किया और

ब्रिटिश सरकार के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह की योजना बनाई। जेपी भी इस आंदोलन के दौरान गिरफ्तार हुए। लेकिन वे जेल से भागने में सफल रहे और बाद में आंदोलन को गुप्त रूप से संचालित करते रहे।

हमारे स्वतंत्रता संग्राम के एक और अजेय योद्धा सुभाषचंद्र बोस अगस्त क्रांति के समय भारत में नहीं थे। लेकिन वे स्वतंत्रता संग्राम के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। उस समय बोस जर्मनी और जापान में सक्रिय रूप से काम कर रहे थे, जहाँ उन्होंने अपनी भारतीय राष्ट्रीय सेना (INA) का गठन किया और उसे नेतृत्व प्रदान किया।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के लिए सुभाष चंद्र बोस ने जर्मनी की यात्रा की थी। जहाँ उन्होंने हिटलर से मुलाकात की और जर्मन सरकार से भारत की आजादी के लिए समर्थन मांगा। उन्होंने जर्मनी में आजाद हिंद रेडियो की स्थापना की और भारतीयों को प्रेरित करने के लिए रेडियो प्रसारण शुरू किए। बाद में बोस जापान गए जहाँ उन्होंने जापानी सरकार के समर्थन से भारतीय राष्ट्रीय सेना (INA) का गठन किया। इस सेना का उद्देश्य भारतीय स्वतंत्रता के लिए लड़ना था। INA ने ब्रिटिश सेना के खिलाफ बर्मा और भारतीय सीमा पर लड़ाई लड़ी। 1943 में सुभाष चंद्र बोस ने सिंगापुर में आजाद हिंद सरकार की स्थापना की और 'दिल्ली चलो' का नारा दिया और भारतीयों से ब्रिटिश शासन के खिलाफ उठ खड़े होने की अपील की। सुभाष चंद्र बोस की इन गतिविधियों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को एक नया आयाम दिया और ब्रिटिश शासन के खिलाफ वैश्विक समर्थन प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

देश के कई भाग जैसे– संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) में बलिया, बंगाल में तामलूक, महाराष्ट्र में सतारा, कर्नाटक में धारवाड़ और उड़ीसा में तालचेर व बालासोर में लोगों द्वारा अस्थायी सरकार की स्थापना की गई। पहली अस्थायी सरकार बलिया में चित्तू पाण्डेय के नेतृत्व में बनी थी। सतारा में विद्रोह का नेतृत्व वाई.वी. चौहान और नाना पाटिल ने किया था।

ब्रिटिश सरकार इन सभी घटनाओं से डर गई थी। उसने इस आंदोलन को कुचलने के लिए कठोर कदम उठाए। महात्मा गांधी समेत कई प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। देशभर में आंदोलनकारियों पर लाठीचार्ज, गोलीबारी और गिरफ्तारियों का दौर चला। 8 अगस्त 1942 को सात युवा छात्रों के एक समूह ने स्वतंत्रता संग्राम से अपना जुड़ाव दिखाने के लिए पटना कलेक्ट्रेट भवन पर भारतीय ध्वज फहराने की कोशिश की। देशभक्ति के भाव से शुरू हुआ यह प्रयास दुखद रूप से समाप्त हुआ जब बिना किसी हिचकिचाहट के पुलिस ने उन्हें गोली मार दी। इसके प्रतिकार में कई स्थानों पर आंदोलनकारियों ने सरकारी दफ्तरों और संपत्तियों पर हमला किया, जिससे आंदोलन हिंसक हो गया। ब्रिटिश सरकार ने आंदोलन से संबंधित समाचारों को प्रकाशित करने पर रोक लगा दी। अनेक समाचार पत्रों ने इन प्रतिबंधों को मानने की बजाय अखबार बंद कर दिया। महात्मा गांधी ने इस आंदोलन को अहिंसात्मक रखने की पूरी कोशिश की।उन्होंने अपने अनुयायियों को यह संदेश दिया कि वे किसी भी प्रकार की हिंसा से दूर रहें और सत्याग्रह के मार्ग पर चलें। उनकी गिरफ्तारी के बावजूद वे आंदोलन की आत्मा बने रहे। उन्होंने जेल से भी अपने अनुयायियों को पत्र लिखकर मार्गदर्शन किया और उन्हें संघर्ष जारी रखने की प्रेरणा दी। महात्मा गांधी की विचारधारा केवल राजनीतिक नहीं थी, बल्कि वह समाज सुधार और नैतिकता पर भी जोर देते थे। उनका मानना था कि स्वतंत्रता केवल अंग्रेजों से मुक्ति नहीं है, बल्कि यह भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों और असमानताओं से भी मुक्ति है।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के लिए सुभाष चंद्र बोस ने जर्मनी की यात्रा की थी। जहाँ उन्होंने हिटलर से मुलाकात की और जर्मन सरकार से भारत की आजादी के लिए समर्थन मांगा। उन्होंने जर्मनी में आजाद हिंद रेडियो की स्थापना की और भारतीयों को प्रेरित करने के लिए रेडियो प्रसारण शुरू किए। बाद में बोस जापान गए जहाँ उन्होंने जापानी सरकार के समर्थन से भारतीय राष्ट्रीय सेना (INA) का गठन किया।

अगस्त क्रांति ने भारतीय जनता को एकजुट किया। दक्षिण भारत में भी अगस्त क्रांति का प्रभाव व्यापक और

महत्वपूर्ण था। यद्यपि उत्तर भारत की तुलना में यहाँ आंदोलन की प्रकृति कुछ अलग थी। फिर भी यह आंदोलन स्थानीय समाज और राजनीति पर गहरा प्रभाव डालने में सफल रहा। मद्रास (अब चेन्नई) में बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन और हड़तालें हुई। विश्वविद्यालयों और कॉलेजों के छात्रों ने आंदोलन में सक्रिय भाग लिया। चित्तूर में सुब्रमण्यम पिल्लई और सी. राजगोपालाचारी जैसे प्रमुख नेता महत्वपूर्ण भूमिका में थे। केरल में कोचीन और त्रावणकोर जैसे रियासतों में भी आंदोलन की लहर फैली। पय्यानूर और कालीकट जैसे क्षेत्रों में सक्रिय विरोध प्रदर्शन हुए। केरल के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में समान रूप से लोगों ने भाग लिया। बंगलोर और मैसूर जैसे शहरों में विरोध प्रदर्शनों की बड़ी संख्या में खबरें आई। छात्रों और युवाओं ने आंदोलन को गति दी। कई नेता जैसे टी. प्रकाशम और के. चेंगलराय रेड्डी इस आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभा रहे थे। आंध्र प्रदेश के विशाखापत्तनम और विजयवाड़ा में आंदोलन की तीव्रता देखी गई। वहाँ किसान और मजदूर वर्ग के लोगों ने सक्रिय भागीदारी दिखाई। पोट्टी श्रीरामुलु और अन्य स्थानीय नेताओं ने आंदोलन को समर्थन दिया और पूरा दक्षिण भारत अगस्त क्रांति से सराबोर हो गया।

इस आंदोलन ने भारतीयों को यह विश्वास दिलाया कि वे संगठित होकर अपने अधिकारों के लिए लड़ सकते हैं। इसने भारतीय समाज में एक नई चेतना और जागरूकता फैलाई। अगस्त क्रांति ने ब्रिटिश सरकार पर जबरदस्त दबाव डाला। ब्रिटिश सरकार ने महसूस किया कि अब वे भारत पर लंबे समय तक राज नहीं कर सकते। इस आंदोलन ने उन्हें यह समझने पर मजबूर किया कि भारतीय जनता अब और अधिक अत्याचार सहन नहीं करेगी और वह अपनी स्वतंत्रता के लिए किसी भी हद तक जा सकती है।

'भारत छोड़ो' आंदोलन ने विश्व के विभिन्न देशों में ब्रिटिश शासन के खिलाफ समर्थन को बढ़ावा दिया। इस आंदोलन ने ब्रिटिश साम्राज्य की छवि को कमजोर किया। दुनिया भर में ब्रिटिश शासन के खिलाफ विरोध और आलोचना बढ़ी, जिससे साम्राज्य की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचा। आंदोलन की खबरें अंतरराष्ट्रीय मीडिया में व्यापक रूप से प्रसारित हुई, जिससे दुनिया भर में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के प्रति जागरूकता बढ़ी और अंतरराष्ट्रीय समुदाय का ध्यान आकर्षित हुआ। आंदोलन के बाद भारतीय स्वतंत्रता का मुद्दा संयुक्त राष्ट्र जैसे अंतरराष्ट्रीय मंचों पर उठाया गया। इससे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को वैश्विक मान्यता मिली और ब्रिटिश सरकार पर अंतरराष्ट्रीय दबाव बढ़ा। महात्मा गांधी और अन्य भारतीय नेताओं की अहिंसात्मक विरोध की नीति ने दुनिया भर के नेताओं को प्रभावित किया। कई नेताओं ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का समर्थन किया और इसे अपने संघर्षों के लिए प्रेरणा माना। इस प्रकार, भारत छोड़ो आंदोलन ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को मजबूती प्रदान की और ब्रिटिश शासन के खिलाफ वैश्विक समर्थन को बढ़ावा दिया।

ब्रिटिश सरकार की नीतियों और अत्याचारों से भारतीय जनता में आक्रोश बढ़ गया था। महात्मा गांधी के नेतृत्व में शुरू किए गए इस आंदोलन ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को एक नई दिशा दी और भारतीय जनता को एकजुट किया। इस आंदोलन ने ब्रिटिश सरकार पर दबाव बढ़ाया और स्वतंत्रता की नींव रखी। अंततः यह आंदोलन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ और इसके बाद भारत की स्वतंत्रता की दिशा में तेजी से कदम बढ़े। इस आंदोलन के बाद ही अंग्रेज सरकार ने भारतीय नेताओं के साथ बातचीत शुरू की और अंततः 1947 में भारत को स्वतंत्रता मिली। इस आंदोलन के दौरान 'भारत छोड़ो' का जो नारा हमारे देश में गूंज रहा था, वह बहुत जल्दी 'एशिया छोड़ो' के नारे में बदल गया। उसी समय एक-एक कर एशिया के बहुत से देश औपनिवेशिक सत्ता के चंगुल से मुक्त हुए। भारत के नजरिए से देखें तो गांधीजी का योगदान इस संघर्ष में अमूल्य था। उन्होंने न केवल स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी, बल्कि भारत को एक आत्मनिर्भर और आत्मसम्मान से गौरवान्वित राष्ट्र बनाने की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

(लेखक पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय के कुलपति हैं।)

भारत छोड़ो आंदोलन बना जन-आंदोलन

दिनेश कुमार

भारत में क्रिप्स मिशन यह देखने आया था कि लंदन बैठी ब्रिटिश हुकूमत को बरसों तक राज करने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं और ब्रिटिश सरकार को क्या फैसले लेने चाहिए। मगर, हुआ उल्टा। क्रिप्स मिशन तो आया, मगर वह भारत में जहां-जहां गया उसका स्वागत विरोध के नारे से हुआ। गांधीजी ने उसी वक्त पहचान लिया कि अब भारत में ब्रिटिश हुकूमत का अंतिम अध्याय लिखने का समय आ गया है। क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद महात्मा गांधी ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ असहयोग, सविनय अवज्ञा के बाद अपना तीसरा बड़ा आंदोलन छेड़ने का फैसला लिया। 8 अगस्त 1942 की शाम को मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सत्र में 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा दिया गया। तब गांधीजी ने आम जनता को संबोधित करते हुए यह कहा था कि अब से हर व्यक्ति खुद ही अपना नेतृत्व करेगा। गांधीजी की इसी बात ने देश में उस वक्त हर व्यक्ति को गांधी बना दिया। अगली सुबह यानी नौ अगस्त को जब गांधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया तो देश भर के युवाओं समेत आम आदमी ने इस आंदोलन की बागडोर अपने हाथ ले ली। कांग्रेस में जयप्रकाश नारायण जैसे समाजवादी सदस्य भूमिगत आंदोलन जैसी गतिविधियों में सबसे ज्यादा सक्रिय थे। पश्चिम में सतारा और पूर्व में मेदिनीपुर जैसे कई जिलों में स्वतंत्र सरकार, प्रतिसरकार की स्थापना कर दी गई थी। अंग्रेजों ने आंदोलन के प्रति काफी सख्त रवैया अपनाया फिर भी इस विद्रोह को दबाने में सरकार को साल भर से ज्यादा का समय लग गया।

वास्तव में देखा जाए तो भारत छोड़ो आंदोलन सही मायने में एक जन आंदोलन था, जिसमें लाखों आम हिंदुस्तानी शामिल थे। इस आंदोलन में बूढ़े, बच्चे, महिलाएं और युवाओं की बड़ी संख्या थी। बच्चों ने अपने स्कूलों का बहिष्कार किया तो महिलाओं और युवाओं ने विदेशी कपड़ों की होली जलाई। उन्होंने अपने कॉलेज छोड़कर जेल का रास्ता अपनाया। जिस दौरान कांग्रेस के नेता जेल में थे उसी समय जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग के साथी अपना प्रभाव फैलाने में लगे थे। इन्हीं सालों में मुस्लिम लीग को

क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद महात्मा गांधी ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ असहयोग, सविनय अवज्ञा के बाद अपना तीसरा बड़ा आंदोलन छेड़ने का फैसला लिया। 8 अगस्त 1942 की शाम को मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सत्र में 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' ...

पंजाब और सिंध में अपनी पहचान बनाने का मौका मिला जहां अभी तक उसका कोई खास वजूद नहीं था।

अंग्रेजी सरकार ने ग्वालिया टैंक मैदान में भाषण देने वाले और भारत छोड़ो आंदोलन का नारा देने वाले चारों नेताओं महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और अबुल कलाम आजाद को गिरफ्तार कर लिया। इन चारों को जेल भेज दिया गया। इसके साथ ही पूरे देश में अंग्रेजी सरकार के खिलाफ एक जन आंदोलन शुरू हो गया। हर कोई गांधीजी के बताए हुए अहिंसा और सत्याग्रह के रास्ते पर चल पड़ा था। हालांकि, कुछ युवक जोश-जोश में अंग्रेज अफसरों से लड़ भी पड़ते थे।

देश में आपातकाल जैसी स्थिति, बाद में लाठी-गोली का जवाब पत्थरों से स्वतंत्रता आंदोलन की 'ग्रैंड ओल्ड लेडी' के रूप में लोकप्रिय अरुणा आसफ अली को भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में भारतीय ध्वज फहराने के लिये जाना जाता है। 'भारत छोड़ो' का नारा एक समाजवादी और ट्रेड यूनियनवादी यूसुफ मेहरली द्वारा गढ़ा गया था, जिन्होंने मुंबई के मेयर के रूप में भी काम किया था। कांग्रेस की तो पूरी कार्यसमिति को गिरफ्तार कर लिया गया। साथ ही देश में आपातकाल जैसी स्थिति बनाकर प्रेस पर प्रतिबंध लगा दिए। कई जगहों पर कर्फ्यू लगा दिया तथा शांतिपूर्ण प्रदर्शनों और हड़तालों पर भी रोक लगा दी। जर्मनी का आक्रमण झेल रहे यूरोप को लोकतंत्र देने के लिए लड़ाई का दावा करने वाली सरकार भारत में हिटलर जैसा ही फासिस्ट व्यवहार कर रही थी। लेकिन जनता ने इस बार कमर कस ली थी। करो या मरो का जादुई असर हुआ था। पहले दो दिन पूरी तरह से शांतिपूर्ण आंदोलन हुए थे, लेकिन ब्रिटिश हुकूमत ने जब उन पर भी लाठियां और गोलियां चलाई तो जनता ने भी पत्थर उठा लिए। जून 1944 में जब विश्वयुद्ध समाप्ति की ओर था तो अंतरराष्ट्रीय और घरेलू मोर्चे पर लगातार फेल हो रही अंग्रेजी सरकार ने गांधी जी को रिहा कर दिया। जेल से निकलने के बाद उन्होंने कांग्रेस और लीग के बीच फासले को पाटने के लिए जिन्ना के साथ कई बार बात की। 1945 में ब्रिटेन में लेबर पार्टी की सरकार बनी। यह सरकार भारतीय स्वतंत्रता के पक्ष में थी। उसी समय वायसराय लॉर्ड वावेल ने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों के बीच कई बैठकों का आयोजन किया। मगर बात नहीं बनी। जिन्ना भारत के बंटवारे से कम कुछ भी नहीं चाहते थे।

आश्रम में शुरु हुआ पहला करघा, आंदोलनों को दी ताकत महात्मा गांधी ने हिन्द स्वराज में यह माना था कि ''चरखे के जरिये हिंदुस्तान की कंगालियत मिट सकती है और यह तो सबके समझ सकने जैसी बात है कि जिस रास्ते भुखमरी मिटेगी उसी रास्ते स्वराज्य मिलेगा। सन् 1915 में दक्षिण अफ्रीका से हिन्दुस्तान वापस आया, तब भी चरखे के दर्शन नहीं किये थे। आश्रम के खुलते ही उसमें करघा शुरू किया था। करघा शुरू करने में भी मुझे बड़ी मुश्किल का सामना करना पड़ा। हम सब अनजान थे, अतएव करघे के मिल जाने भर से करघा चल नही सकता था। आश्रम में हम सब कलम चलाने वाले या व्यापार करना जाननेवाले लोग इकट्ठा हुए थे, हममें कोई कारीगर नही था। इसलिए करघा प्राप्त करने के बाद बुनना सिखाने वाले की आवश्यकता पड़ी। काठियावाड़ और पालनपुर से करघा मिला और एक सिखाने वाला आया। उसने अपना पूरा हुनर नही बताया।'' मगर, गांधीजी अपने शुरू किये हुए काम को जल्दी छोड़नेवाले न थे। उनके हाथ में कारीगरी तो थी ही। इसलिए उन्होने बुनने की कला पूरी तरह समझ ली और फिर आश्रम मे एक के बाद एक नये-नये बुनने वाले तैयार हुए। ''हमे तो अब अपने कपड़े तैयार करके पहनने थे। इसलिए आश्रमवासियों ने मिल के कपड़े पहनना बन्द किया और यह निश्चय किया कि वे हाथ-करघे पर देशी मिल के सूत का बुना हुआ कपड़ा पहनेंगे। ऐसा करने से हमें बहुत कुछ सीखने को मिला।'' महात्मा गांधी की यह आत्मकथा बताती है कि कैसे चरखे ने अंग्रेजों को आंदोलनों के दौरान आर्थिक चोट पहुंचाई। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भी यही चरखा आंदोलन की ताकत बना। 1920 के दशक में भारत में हाथ से बने खादी वस्त्रों की शुरुआत हुई तो यह विचारधारा के रूप में आगे बढ़ी। महात्मा गांधी ने सूती को भारत की आत्मनिर्भरता का प्रतीक बनाया। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भी लोगों ने खासकर गांव की महिलाओं ने चरखे से

बने धागे से खादी के कपड़े बनाए और विदेशी कपड़ों का बहिष्कार किया। महात्मा गांधी ने खादी के जरिए एक आंदोलन की शुरुआत की। खादी और चरखा, यह दो ऐसे प्रतीक हैं जिन्होंने आजादी की लड़ाई में पूरे देश को संगठित किया। यही वजह है कि खादी के शस्त्र से ऐसा हमला हुआ कि अंग्रेजों के पैर उखड़ गए और वे भारत छोडने के लिए विवश हो गए। खादी सिर्फ कपड़ा न होकर यह विचारधारा बन गया है। जहां तक खादी वस्त्र का सवाल है तो अब खादी सिर्फ मोटे धागे के वस्त्र तक सीमित नहीं है बल्कि यह अन्य कंपनियों की ओर से तैयार किए जा रहे उत्पाद की तरह ही विश्व मानचित्र पर अपनी धाक कायम किए हुए हैं।

गांधी आजादी के वक्त भी जश्न मनाने के लिए दिल्ली में नहीं रुके, वे कलकत्ता में दंगाइयों के बीच में थे। 15 अगस्त 1947 को देश की राजधानी दिल्ली में आजादी का जश्न मनाया जा रहा था, मगर अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर मजबूर करने वाले गांधीजी वहां नहीं थे। उस समय वे कलकत्ता में हिंदू-मुस्लिम दंगों के बीच उपद्रवी लोगों को शांत कराने में लगे थे। उन्होंने वहां भी न तो किसी कार्यक्रम में हिस्सा लिया, न ही कहीं झंडा फहराया। गांधीजी उस दिन 24 घंटे के उपवास पर थे। उन्होंने इतने दिन तक जिस स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया था, वह एक अकल्पनीय कीमत पर उन्हें मिली थी। उनका राष्ट्र विभाजित था। हिंदू-मुसलमान एक-दूसरे की गर्दन पर सवार थे। उनके जीवनी लेखक डीजी तेंदुलकर ने लिखा है कि सितंबर और अक्तूबर के दौरान गांधीजी पीड़ितों को सांत्वना देते हुए अस्पतालों और शरणार्थी शिविरों के चक्कर लगा रहे थे। उन्होंने सिखों, हिंदुओं और मुसलमानों से आह्वान किया कि वे अतीत को भुला कर अपनी पीड़ा पर ध्यान देने की बजाय एक-दूसरे के प्रति भाईचारे का हाथ बढ़ाने तथा शांति से रहने का संकल्प लें।

धर्म निरपेक्षता के लिए अड़ गए थे गांधीजी: गांधी जी और नेहरू के आग्रह पर कांग्रेस ने अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर एक प्रस्ताव पारित कर दिया। कांग्रेस ने दो राष्ट्र सिद्धान्त को कभी स्वीकार नहीं किया था। जब उसे अपनी इच्छा के विरुद्ध बंटवारे पर मंजूरी देनी पड़ी तो भी उसका दृढ़ विश्वास था कि भारत बहुत सारे धर्मों और बहुत सारी नस्लों का देश है और उसे ऐसे ही बनाए रखा जाना चाहिए। पाकिस्तान में हालात जो रहें, भारत एक लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र होगा जहां सभी नागरिकों को पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे तथा धर्म के आधार पर भेदभाव के बिना सभी को राज्य की ओर से संरक्षण का अधिकार होगा। कांग्रेस ने आश्वासन दिया कि वह अल्पसंख्यकों के नागरिक अधिकारों के किसी भी अतिक्रमण के विरुद्ध हर मुमकिन रक्षा करेगी।

जब अमेरिकी स्पीकर ने खुद को बताया गांधी का पुजारी: अमेरिकी प्रतिनिधि सभा की स्पीकर रह चुकीं

नैंसी पलोसी ने एक बार खुद को महात्मा गांधी का पुजारी बताया। उन्होंने कहा, गांधी अमेरिका के अहिंसक आंदोलन के आध्यात्मिक नेता थे। यह भारत का अमेरिका की राजनीति में एक तरह से उपहार है। अहिंसक कोशिशें सच्चाई की ओर ले जाती हैं। यही बात मार्टिन लूथर किंग जूनियर भी मानते थे। नैंसी ने एक घटना का जिक्र करते हुए कहा कि 1950 के दशक में जब मैं छोटी बच्ची थी, तब एक बार मैंने स्कूल में हैट पहना था। इस दौरान एक नन ने मुझसे पूछा कि तुम्हे क्या लगता है तुम क्या हो, महात्मा गांधी हो। तुम किससे प्रभावित हो? क्या महात्मा गांधी से? उस वक्त मुझे गांधीजी के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। तब मैं उनके बारे में जानने के लिए लाइब्रेरी गई। वहां मैंने गांधी के बारे में बच्चों की एक किताब देखी। फिर जब मैं कॉलेज गई तब मैंने गांधी के बारे में कई किताबें पढ़ीं और फिर जान पाई कि गांधी क्या थे।

अजीम प्रेमजी ने कहा था हमें संपत्ति का ट्रस्टी होना चाहिए, मालिक नहीं। विप्रो के चेयरमैन और प्रबंध निदेशक रहे अजीम प्रेमजी ने एक बार कंपनी की सालाना बैठक में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की बात को दोहराते हुए कहा था कि हमें समाज के लिए संपत्ति का ट्रस्टी होना चाहिए, मालिक नहीं। उन्होंने परोपकार के लिए अधिकांश संपत्ति के दान का भी जिक्र किया। अजीम प्रेमजी ने अभी तक कुल 1.5 लाख करोड़ रुपये दान में दिए हैं, जोकि विप्रो में कुल हिस्सेदारी का 67 फीसदी है।

जब टिम कुक ने कहा, मैंने बापू के सत्य के प्रयोग से बढ़ाई जीवन की समझ: प्रतिष्ठित आईफोन निर्माता कंपनी एप्पल के मुख्य कार्यकारी अधिकारी रहे टिम कुक की जिंदगी भी महात्मा गांधी की जिंदगी से खासी प्रभावित रही है। एप्पल की कमान संभालने से पहले टिम की जिंदगी ने जिन चार किताबों से करवट ली, उनमें से एक महात्मा गांधी की जीवनी भी है। ये चार किताबें हैं-खुद बापू द्वारा लिखी हुई किताब 'गांधी: एक जीवनी-सत्य के साथ मेरे प्रयोग', जॉन लेविस, एंड्रयू एडिन और नेटे पॉवेल द्वारा लिखी गई किताब 'मार्च: बुक वन', लैरी टाई द्वारा लिखी गई पुस्तक 'बॉबी केनेडी: द मेकिंग ऑफ ए लिबरल आइकन' और जॉर्ज स्टाक द्वारा लिखी गई किताब 'कंपीटिंग अगेंस्ट टाइम: हाउ टाइम बेस्ड कंपटीशन इज रिशेपिंग ग्लोबल मार्केट्स' है। कुक का मानना है कि गांधी की जिंदगी उन्हें विपरीत हालातों में जूझने की प्रेरणा देती है। यही वजह है कि कुक यह वकालत करते नजर आते हैं कि आप जिस चीज से प्यार करते हैं, उसी को पेशा बनाइए, काम फिर काम नहीं रह जाएगा। यह कहावत है कि आप जो पसंद करते हैं, यदि उसी को चुनते हैं तो जिंदगी में एक भी दिन काम नहीं करेंगे।

अजीम प्रेमजी ने कहा था हमें संपत्ति का ट्रस्टी होना चाहिए, मालिक नहीं: विप्रो के चेयरमैन और प्रबंध निदेशक रहे अजीम प्रेमजी ने एक बार कंपनी की सालाना बैठक में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की बात को दोहराते हुए कहा था कि हमें समाज के लिए संपत्ति का ट्रस्टी होना चाहिए, मालिक नहीं। उन्होंने परोपकार के लिए अधिकांश संपत्ति के दान का भी जिक्र किया। अजीम प्रेमजी ने अभी तक कुल 1.5 लाख करोड़ रुपये दान में दिए हैं, जोकि विप्रो में कुल हिस्सेदारी का 67 फीसदी है। 30 जुलाई को चेयरमैन पद से रिटायर होने वाले अजीम प्रेमजी ने अपने शानदार करियर के दौरान पिता की कुकिंग ऑइल कंपनी को ग्लोबल आईटी पावर हाउस में बदल दिया। जलवायु परिवर्तन को मानव के सामने सबसे बड़ी चुनौती बताते हुए प्रेमजी ने कहा,'यह भी साफ है कि इस चुनौती का सामना करने के लिए कारोबारियों को भी योगदान देना होगा। उन्होंने कहा, मैं गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत से गहरे से प्रभावित था। जिसके मुताबिक संपत्ति की अवधारणा समाज की बेहतरी के लिए किया जाना चाहिए। न कि यह किसी एक के हाथों में होनी चाहिए। गांधी की संपत्ति की अवधारणा भावी अवधारणा है, जिससे समाज में व्यापक बदलाव आ सकता है।

दुनिया भर के सीईओ ने माना, जननेताओं में गांधी सबसे आगे दुनियाभर की कंपनियों के मुख्य कार्यकारी (सीईओ) महात्मा गांधी का बखान करते हैं।

पीडब्ल्यूसी द्वारा दुनियाभर में सीईओ पर कराए गए सर्वेक्षण में कहा गया था कि वैश्विक स्तर पर सीईओ तीन हस्तियों से सबसे अधिक प्रभावित हैं, जिनमें गांधी शामिल हैं। सर्वेक्षण में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री विन्सटन चर्चिल शीर्ष पर हैं, जबकि स्टीव जॉब्स (एप्पल के सह संस्थापक) दूसरे स्थान पर हैं और वहीं, महात्मा गांधी तीसरे पायदान पर हैं। हालांकि, जननेताओं में गांधी अग्रणी पसंदीदा शख्सीयत रहे हैं। 2013 में पीडब्ल्यूसी ने अपने वार्षिक सर्वेक्षण में दुनियाभर के 1,400 सीईओ से पूछा था कि वे सबसे अधिक किस नेता को पसंद करते हैं। सीईओ ने योद्धाओं में नेपोलियन, सिकंदर महान, सुधारकों में जैक वेल्च, प्रतिकूल परिस्थिति में काम करने वालों में विन्सटन चर्चिल, अब्राहम लिंकन, जन नेताओं में महात्मा गांधी, नेल्सन मंडेला को पसंद किया। पीडब्ल्यूसी के मुताबिक, नेल्सन मंडेला चौथे, जैक वेल्च पांचवें और अब्राहम लिंकन छठे पायदान पर रहे।

कस्तूरबा बन गई आंदोलनों की नींव की ईंट, गांधीजी खुद मानते थे यह बात: ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ आजादी की लड़ाई में गांधीजी के आंदोलनों में उनकी पत्नी कस्तूरबा ने नींव की ईंट का काम किया। हालांकि, गांधीजी अपने आंदोलनों में व्यस्त रहने की वजह से कस्तूरबा को ज्यादा वक्त नहीं दे पाए। वह खुद भी मानते थे कि उन्होंने बा को बहुत कष्ट पहुंचाया था। महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा माई एक्सपेरिमेंट विद ट्रूथ (सत्य के प्रयोग) में बड़ी बेबाकी से एक पुरुष की महिला पर हावी होने की मानसिकता को उजागर किया है। उन्होंने अपने बाल विवाह के शुरुआती दिनों में माना है कि कस्तूरबा को वह अपने मुताबिक ढालना चाहते थे। हालांकि, बाद में गांधीजी ने खुद ही माना है कि कस्तूरबा ने उनकी जिंदगी में मिठास घोल दी। अगर, वह न होतीं तो इतने बड़े आंदोलन को धैर्य और समर्पण के साथ नहीं चलाया जा सकता था। कस्तूरबा और गांधी एक-दूसरे के पूरक थे। गांधीजी पत्नी को साधन नहीं समझते थे। बा ने गांधीजी की अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ छेड़ी गई लड़ाई को और मजबूत बनाया। महिलाओं को इसमें जोड़ा, जिससे हिंदुस्तान का घर-घर आजादी के इस आंदोलन से जुड़ा।

कस्तूरबा की शराबबंदी और विदेशी वस्त्रों की होली जलाने में अहम भूमिका: बा ने असहयोग और सविनय अवज्ञा जैसे आंदोलनों में अहम भूमिका निभाई थी। उन्होंने महिलाओं को एकजुट कर शराबबंदी के खिलाफ मुहिम चलाई थी। ब्रिटिश हुकूमत को सीधे चोट पहुंचाने के लिए विदेशी वस्त्रों की होली जलाई थी। देश में स्वदेशी के पीछे गांधीजी के साथ-साथ बा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बा ने महिलाओं को आंदोलनों से जोड़ा, ताकि हर घर से अंग्रेजों के खिलाफ विरोध के सुर उठें और आंदोलन को और मजबूत किया जा सके। वहीं, पहला गिरमिटिया जैसे कालजयी उपन्यास लिखने वाले गिरिराज किशोर ने कस्तूरबा पर भी किताब लिखी है। वह लिखते हैं कि बा ने गांधीजी के आंदोलनों के दौरान अहम भूमिका निभाई है। आश्रमों को देखने का जिम्मा उन्हीं का था। भारत में और दक्षिण अफ्रीका में भी वह बेहद सक्रिय रहीं। सामाजिक आंदोलन में अहम भूमिका निभाई। दक्षिण अफ्रीका में जब गांधीजी जेल गए थे, तब भी वह आश्रम और राजनीति दोनों का काम देखा करती थीं। लोगों ने उनसे कहा कि आप स्वदेश चली जाइए तो उन्होंने कहा कि आंदोलन और आश्रम को कौन देखेगा? देश में भी हर आंदोलन में उन्होंने गांधीजी का साथ दिया।

ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ आजादी की लड़ाई में गांधीजी के आंदोलनों में उनकी पत्नी कस्तूरबा ने नींव की ईंट का काम किया। हालांकि, गांधीजी अपने आंदोलनों में व्यस्त रहने की वजह से कस्तूरबा को ज्यादा वक्त नहीं दे पाए। वह खुद भी मानते थे कि उन्होंने बा को बहुत कष्ट पहुंचाया था। महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा 'माई एक्सपेरिमेंट विद ट्रूथ' (सत्य के प्रयोग) में बड़ी बेबाकी से एक पुरुष की महिला पर हावी होने की मानसिकता को उजागर किया है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)

आखिरी संघर्ष का स्वतंत्र गानः करो या मरो

संजीत कुमार

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जापान के आक्रामक रुख और उससे उत्पन्न खतरे को देखते हुए भारत का सहयोग ब्रिटेन के लिए महत्वपूर्ण था। इसलिए युद्ध के दौरान 1942 में सर स्टैफोर्ड क्रिप्स को भारतवासियों के लिए एक घोषणा का मसौदा देकर सुलह के लिए भेजा गया, क्योंकि तत्कालीन प्रधानमंत्री चर्चिल के ऊपर लेबर पार्टी के नेताओं का युद्ध में भारत के लोगों के सहयोग का दबाव था। मूल तौर पर यह एक चालाकी का मसौदा था जिससे युद्ध में उनकी कमजोर स्थिति को भारतीय सहयोग से थोड़ा संबल प्राप्त करना था जो कि यहाँ के लोगों के लिए अस्पष्ट एवं झुनझुना थमाने जैसा था। एक तरफ ब्रिटेन युद्ध तो स्वतंत्रता और प्रजातंत्र के नाम पर लड़ रहा था वहीं दूसरी तरफ भारतीयों को स्वतंत्रता से वंचित रखना चाहता था।

यूँ तो द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत 1939 में ही हो गई थी और 3 सितंबर 1939 को चर्चिल ने बगैर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से विचार–विमर्श किए भारत को इंग्लैंड एवं मित्र राष्ट्रों के साथ जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में शामिल होने के लिए घोषणा कर दी थी। यह भारतीय स्वाभिमान के ऊपर एक ठेस जरूर थी परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रति कांग्रेस का रुख द्वंद्वात्मक था। एक तरफ उसकी सहानुभूति ब्रिटेन और मित्र राष्ट्रों के प्रति थी परन्तु दूसरी तरफ ब्रिटिश शासन व्यवस्था से गहरा असंतोष भी था। कांग्रेस पार्टी जर्मनी में उभरे नाजियों एवं इटली के फासिस्टों को प्रगति एवं स्वतंत्रता का दुश्मन मानती थी और कांग्रेस ने अपनी घोषणा में कहा भी था कि अगर इस युद्ध का उद्देश्य साम्राज्यवाद और फासीवाद को हटाकर स्वतंत्रता और लोकतंत्र की स्थापना है तो भारत इस युद्ध में साथ देने को तैयार है।

1935 ई० में भारत शासन अधिनियम के तहत देश में कांग्रेस सरकार आठ प्रान्तों में काम कर रही थी परन्तु फिरंगियों की हुकूमत ने भारत देश के लोगों के मंतव्य जाने बिना और बगैर कांग्रेस पार्टी की सहमति से इस गरीब देश के संसाधनों को युद्ध में अपनी साख बचाने के लिए झोंक दिया। अंग्रेजों ने कई भारतीय नौजवानों को यूरोप की सरजमीं पर जर्मन तोपों के सामने खड़ा कर दिया। भारत के लोगों में गहरा क्षोभ था और स्वतंत्रता के

यूँ तो द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत 1939 में ही हो गई थी और 3 सितंबर 1939 को चर्चिल ने बगैर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से विचार- विमर्श किए, भारत को इंग्लैंड एवं मित्र राष्ट्रों के साथ जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में शामिल होने के लिए घोषणा कर दी थी। यह भारतीय स्वाभिमान के ऊपर एक ठेस जरूर था, परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रति ...

लिए कांग्रेस पार्टी के ऊपर जनमत का दबाव था। नतीजतन कांग्रेस ने प्रस्ताव रखा कि अगर ब्रिटिश सरकार केन्द्र में भारतीयों को लेकर एक ऐसी सरकार का गठन कर दे जो विधानसभा के प्रति उत्तरदायी हो और सरकार युद्ध के बाद भारत को स्वाधीनता प्रदान करे तो कांग्रेस ब्रिटिश सरकार को युद्ध में सहयोग देने को तैयार है। जवाब में प्रधानमंत्री विन्सटन चर्चिल ने कहा, ''मैं ब्रिटिश सरकार के विघटन की अध्यक्षता के लिए ब्रिटेन का प्रधानमंत्री नहीं बना हूँ''। सरकारी वक्तव्य में कहा गया, "ब्रिटेन ऐसी भारतीय सरकार को सत्ता नहीं सौंप सकती, जिस पर भारतीय जनता के बड़े हिस्सों को आपत्ति हो।" तत्कालीन परिवेश में मोहम्मद अली जिन्ना धर्म के आधार पर मुस्लिमों को बहलाकर एक अलग सक्रिय संगठन बना चुके थे जिसकी राजनीति कांग्रेस विरोधी थी। ब्रिटिशों का इशारा मूलरूप से गैर–कांग्रेसी मुसलमानों की तरफ ही था।

कांग्रेस से समझौते की कोशिश

1941 तक द्वितीय विश्व युद्ध में ब्रिटेन की स्थिति नाजुक हो चुकी थी। पोलैंड, फ्रांस, बेल्जियम, नॉर्वे एवं अन्य कई पूर्वी यूरोपीय देशों पर जर्मनी का कब्जा हो गया था परन्तु जैसे ही जापान युद्ध में शामिल हुआ उसके चार महीने के अंदर अंग्रेजों को इंडोनेशिया, मलाया, सिंगापुर, फिलिपीन, हिंद–चीन और बर्मा से भगा दिया। जापानी साम्राज्यवाद ब्रिटिशों के लिए एक गंभीर चुनौती बनकर उभरा क्योंकि पूर्वी एशिया में जापान के प्रभुत्व का शीघ्र ही भारत पहुँचने का खतरा था जिससे मित्र राष्ट्रों का भी ब्रिटिश सरकार पर भारत को आजाद करने का दबाव बढ़ गया।

च्यांगकाई शेक, तत्कालीन चीनी राष्ट्रपति अपनी पत्नी के साथ भारत आए और गांधीजी से कलकत्ता में मिलकर जापान का विरोध करने के लिए मित्र–राष्ट्रों को सहयोग करने की गुजारिश की। बातचीत में च्यांगकाई शेक गांधीजी को एक चालाक और धूर्त व्यक्ति लगे और गांधीजी ने उनके प्रस्ताव में कोई रूचि नहीं दिखलाई।

चर्चिल पर अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट और ब्रिटेन की लेबर पार्टी के बहुत से नेताओं का दबाव भी बढ़ने लगा ताकि ब्रिटेन भारतवासियों का सक्रिय सहयोग द्वितीय विश्वयुद्ध में प्राप्त कर सके। चर्चिल ने मार्च 1942 में लेबर पार्टी के अपने मंत्रिमंडल में समाजवादी सहयोगी सर स्टैफोर्ड क्रिप्स को भारत से बात करने के लिए एक घोषणा के मसौदे के साथ भेजा, जिसे क्रिप्स मिशन कहा जाता है।

गांधीजी और क्रिप्स मिशन

क्रिप्स की मुलाकात गांधीजी से भी हुई और उनके मसौदे को उन्होंने बारीकी से समझा और उनसे कहा, ''यदि यही आपके प्रस्ताव थे, तो आपने यहाँ आने का कष्ट क्यों उठाया? मैं आपको सलाह दूंगा कि आप अगले हवाई जहाज से ब्रिटेन लौट जाएँ।'' गांधीजी ने पूरे मसौदे को "दिवालिया बैंक के नाम अगली तारीख का चेक कहा" और इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। 12 अप्रैल 1942 को क्रिप्स वापस इंग्लैंड लौट गया और अपना राजनीतिक जीवन बचाने के लिए अपनी असफलता का संपूर्ण दोष गांधीजी के ऊपर डाल दिया।

क्रिप्स मिशन की असफलता के बाद ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों पर अत्याचार शुरू कर दिया। जापानियों के डर से ब्रिटिश सेना देश के कोने–कोने मे तैनात की गई और कई अतिरिक्त सेना लगाई गई, जिसका खर्च भारत सरकार वहन करती थी। लोगों पर कर बढ़ा दिया गया और देश में खाद्यानों और सभी जरूरी मूलभूत सामानों के दाम में बेतहाशा वृद्धि होने लगी। ब्रिटिशों के द्वारा सभा करना, बोलना और भी कई गतिविधियों पर अंकुश लगा दिया गया। जनता बिलकुल निराशा के गर्त में थी, परेशान थी।

अगस्त क्रांति का स्वतंत्र गान : करो या मरो

14 जुलाई 1942 को कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक वर्धा में हुई जिसमें 'भारत छोड़ो' आंदोलन का प्रस्ताव पारित किया गया और यह भी फैसला किया गया कि इस प्रस्ताव पर अंतिम निर्णय लेने के लिए 7 और 8 अगस्त को बंबई में ए. आई. सी. सी की एक बैठक बुलाई जाए। 8 अगस्त 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस की बैठक बंबई (मुंबई) के ग्वालिया टैंक मैदान में हुई और भारत छोड़ो आंदोलन के प्रस्ताव को मंजूरी मिली और रात में यह

अधिवेशन समाप्त हो गया। इस प्रस्ताव में यह घोषणा की गई कि भारत में ब्रिटिश शासन की तत्काल समाप्ति स्वतंत्रता तथा लोकतंत्र की स्थापना के लिए अति आवश्यक हो गई है।

ग्वालिया टैंक मैदान में भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव पारित होने के बाद गांधीजी ने कहा था कि, ''एक छोटा-सा मंत्र है जो मैं आपको देता हूँ। इसे आप अपने हृदय में अंकित कर लें और अपनी हर सांस में उसे अभिव्यक्त करें। यह मंत्र है- 'करो या मरो।' अपने इस प्रयास में हम या तो स्वतंत्रता प्राप्त करेंगे या फिर जान दे देंगे।''

एक अहिंसात्मक सैनिक खुद के लिए कोई लोभ नही करता, वह केवल देश की आजादी के लिए ही लड़ता है। गांधीजी ने कार्यसमिति में कहा था कि मेरा इस बात पर पूरा विश्वास है कि जब हिंसा का उपयोग कर आजादी के लिए संघर्ष किया जाएगा तब लोग लोकतंत्र के महत्व को समझने में असफल होंगे। जिस लोकतंत्र का विचार मैने कर रखा है उसका निर्माण अहिंसा से होगा ...

इस तरह 'करो या मरो' का यह नारा भारतीयों के लिए स्वतंत्रता का गान बन गया और इस क्रांति गान को एक साथ समूचे देश के लोगों ने गुनगुनाया जिसने अंग्रेजी शासन की जड़ें हिला दी।

आंदोलन प्रस्ताव के पास होने के बाद ही गांधीजी समेत सभी कांग्रेसी नेताओं को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया। 09 अगस्त 1942 को मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में युवा नेत्री ग्रैंड ओल्ड लेडी के नाम से लोकप्रिय अरुणा आसफ अली ने तिरंगा फहराकर भारत छोड़ो आंदोलन का शंखनाद किया। भारत छोड़ो का नारा एक समाजवादी और ट्रेड यूनियनवादी यूसुफ मेहरअली द्वारा गढ़ा गया था जो मुंबई में मेयर के रूप में काम कर चुके थे। यूसुफ मेहरअली ने ही 'साइमन गो बैक' का नारा भी गढ़ा था।

गांधी और भारत छोड़ो आंदोलन

'करो या मरो' का नारा देते हुए गांधीजी ने कहा था कि अब मुझे डरने के बजाय आगे देखकर बढ़ना होगा। हमारी यात्रा ताकत पाने के लिए नहीं बल्कि भारत की आजादी के लिए अहिंसात्मक लड़ाई के लिए है। हिंसात्मक यात्रा में तानाशाही की संभावनाएँ ज्यादा होती है जबकि अहिंसा में तानाशाही के लिए कोई जगह नहीं है। एक अहिंसात्मक सैनिक खुद के लिए कोई लोभ नहीं करता, वह केवल देश की आजादी के लिए ही लड़ता है। गांधीजी ने कार्यसमिति में कहा था कि मेरा इस बात पर पूरा विश्वास है कि जब हिंसा का उपयोग कर आजादी के लिए संघर्ष किया जाएगा तब लोग लोकतंत्र के महत्व को समझने में असफल होंगे। जिस लोकतंत्र का विचार मैंने कर रखा है उसका निर्माण अहिंसा से होगा जहाँ हर किसी के पास समान आजादी और अधिकार होंगे जहाँ हर कोई खुद का शिक्षक होगा और इसी लोकतंत्र के निर्माण के लिए आज मैं आपको आमंत्रित करने आया हूँ। एक बार यदि आपने इस बात को समझ लिया तब आप हिंदू और मुस्लिम के भेदभाव को भूल जाओगे। तब आप एक भारतीय बनकर खुद का विचार रखोगे और आजादी के संघर्ष में साथ दोगे।

09 अगस्त की सुबह जिस तरह से देश भर में बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियाँ हुई उससे लोग उद्वेलित हो गए। ब्रिटिश सरकार की इस कार्रवाई के खिलाफ लोगों ने विशाल प्रदर्शन के द्वारा अपना विरोध प्रकट किया। 9 एवं 10 अगस्त का प्रदर्शन अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण था जैसा कि गांधीजी ने कहा था पर शांतिपूर्ण प्रदर्शन पर हुए बर्बर हमले ने जनता को रेललाइनों तथा डाकतार आदि सेवाओं के तोड़फोड़ के लिए विवश किया। यद्यपि गांधीवादी संघर्ष के नजरिए से आंदोलन की हिंसात्मक प्रकृति उचित नहीं थी परंतु गांधीजी और अन्य कांग्रेसी नेताओं ने हिंसा के लिए जनता के शांतिपूर्ण और अहिंसात्मक प्रदर्शन पर ब्रिटिशों के शक्ति प्रयोग को जिम्मेवार ठहराया।

सरकार ने इन घटनाओं के लिए गांधीजी और अन्य नेताओं को दोषी माना जबकि उनके पास ऐसा कोई सबूत नहीं था कि गांधीजी अथवा कांग्रेस कार्यकारिणी के किसी

सदस्य ने तोड़-फोड़ के लिए जनता को कोई निर्देश दिया हो। कांग्रेस वर्किंग कमेटी के सभी सदस्य और महत्वपूर्ण नेता गिरफ्तार हो चुके थे और कांग्रेस को गैरकानूनी संस्था घोषित कर दिया गया था। गांधीजी के साथ सरोजिनी नायडू जी को यरवदा पुणे के आगाखाँ पैलेस में एवं बाकी अन्य सदस्यों को अहमदनगर के किले में नजरबंद किया गया था। दिल्ली के सेंट्रल असेंबली में माननीय होम मेंबर के द्वारा पेश सरकारी आँकड़ों के अनुसार इस आंदोलन में 940 लोग मारे गए, 1630 घायल हुए एवं 60229 लोग गिरफ्तार हुए।

गांधीजी के द्वारा आह्वान किया गया यह आंदोलन सही मायने में एक जन आंदोलन था जिसमें असंख्य हिन्दुस्तानियों ने भाग लिया। इस आंदोलन ने बड़ी संख्या में युवाओं को भी आकर्षित किया जिन्होंने कॉलेज छोड़कर जेल का रास्ता चुना। कृषक वर्ग, मजदूर वर्ग, महिलाओं ने भी अपनी भागीदारी दी। यद्यपि गांधीजी द्वारा आहूत यह आंदोलन अन्य कुछ पूर्ववर्ती आंदोलनों के विपरीत कुछ हद तक हिंसक था परंतु शायद इसका कारण आंदोलन की घोषणा होते ही कांग्रेस के सभी बड़े नेताओं की गिरफ्तारी रही होगी और इसके बाद आंदोलन की बागडोर जनता के हाथों में आ गई जिन्होंने अपने-अपने ढंग से इसकी विवेचना की। सरकार द्वारा आंदोलन को कुचलने का दमनकारी प्रयास भी काफी हद तक आंदोलन के उग्र होने का कारण था। दमन के विरोध में गांधीजी ने जेल में ही 10 फरवरी 1943 से 21 दिनों के उपवास की घोषणा कर दी जिसकी खबर ने भी जनता के आक्रोश को बढ़ाने का कार्य किया। जून 1944 में जब द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्ति की ओर था तब गांधीजी को जेल से रिहा कर दिया गया।

भारत छोड़ो आंदोलन के कारण

क्रिप्स मिशन की विफलता : अन्य कई ब्रिटिश दौरे की तरह इस मिशन से भी भारतीयों को कुछ नहीं मिल पाया और क्रिप्स के इस कथन से कि "स्वीकार करो अथवा छोड़ दो" से ऐसा संदेश गया कि ब्रिटिश सरकार भारत के संवैधानिक गतिरोध दूर करने को इच्छुक नहीं है।

जापान के आक्रमण का भय : द्वितीय विश्वयुद्ध में जापानी सेना सिंगापुर, म्यांमार होते हुए भारत की ओर बढ़ रही थी। गांधीजी और अन्य नेताओं को लगता था कि अंग्रेज भारत की रक्षा में असमर्थ हैं, साथ ही उनका मानना था कि अंग्रेज यदि भारत छोड़कर चले जायेंगे तो शायद जापान भारत में आक्रमण नहीं करेगा। गांधीजी का कहना था ''अंग्रेजों भारत को जापान के लिए मत छोड़ो बल्कि भारत को भारतीयों के लिए व्यवस्थित रूप में छोड़ जाओ।'' 'हरिजन' में अपने लेख में गांधीजी ने लिखा है-

"भारत के लिए चाहे उसके परिणाम कुछ भी क्यों न हों, भारत और ब्रिटेन की वास्तविक सुरक्षा, समय रहते इंग्लैड के भारत छोड़ देने में ही है।'' इस तरह कांग्रेस ने गांधीजी के नेतृत्व में भारत छोड़ो आंदोलन प्रारम्भ करने का निश्चय किया।

- भारतीयों नेताओं के पूर्व परामर्श के बिना द्वितीय विश्वयुद्ध में भारत की भागीदारी की ब्रिटिश सरकार द्वारा घोषणा।
- कमजोर होती ब्रिटिश सरकार की स्थिति।

कई छोटे आंदोलनों का केन्द्रीकरण : फारवर्ड ब्लॉक, अखिल भारतीय किसान सभा आदि निकायों के दशकों से चल रहे जन आंदोलन ने इसकी पृष्ठभूमि बनाई।

आंदोलन की सफलता और महत्व

भविष्य के नेताओं का उदय : महत्वपूर्ण कांग्रेसी नेताओं के जेल चले जाने के कारण सुचेता कृपलानी, अरुणा आसफ अली, जय प्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया, बीजू पटनायक, उषा मेहता आदि नेताओं ने भूमिगत गतिविधियों के माध्यम से आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई एवं बाद में देश के प्रमुख नेताओं के रूप में उभरे।

राष्ट्रवाद की भावना का उदय : आंदोलन से देशवासियों में चाहे वह छात्र हो, कृषक हो, मजदूर वर्ग हो, व्यवसायी हो, नौकरीपेशा हो, सबने भागीदारी दिखाई जिससे एकता और भाईचारे की भावना प्रबल हुई। जनता में सरकार का सामना करने के लिए साहस और शक्ति में वृद्धि हुई।

समानांतर सरकार का गठन : उत्तर प्रदेश के

बलिया में चित्तू पांडेय के नेतृत्व में पहली समानांतर सरकार बनी इसके अलावा बंगाल के मिदनापुर के तामलुक नामक स्थान में, बंबई के सतारा आदि कई जगहों पर समानांतर सरकार गठित हुई।

स्वतंत्रता की ओर मार्ग में सहायक : भारतीय स्वतंत्रता की पृष्ठभूमि भारत छोड़ो आंदोलन ने ही तैयार की जिसके फलस्वरूप 5 साल बाद ही भारत को 15 अगस्त 1947 को आजादी मिल गई। डॉ. सुभाष कश्यप के शब्दों में ''1942 का भारत छोड़ो आंदोलन सचमुच 1857 की असफल क्रांति के बाद भारत में अंग्रेजी राज की समाप्ति के लिए किया गया सबसे बड़ा प्रयास था।" पंडित नेहरू ने भी इस आंदोलन एवं उसके कार्यों के लिए प्रसन्नता व्यक्त की थी।

हालाँकि यह आंदोलन तत्काल प्रभाव से भारत को आजादी दिलाने में सफल नहीं हुआ।

आंदोलन की असफलता

गांधीजी के द्वारा भारतीय स्वाधीनता के लिए किया गया यह आंदोलन एक महानतम प्रयास था लेकिन इस आंदोलन का मकसद पूरा नहीं हुआ जिसके लिए आंदोलन का हिंसात्मक स्वरूप, अंग्रेजों की दमनकारी नीतियाँ, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, मुस्लिम लीग आदि का आंदोलन के समर्थन का अभाव, श्री राजगोपालाचारी जैसे कई कांग्रेस सदस्यों की असहमति, आंदोलन की अवधि में सरकारी कर्मचारियों, देशी रियासतों के शासक, सेना, पुलिस और उच्च सरकारी अधिकारियों की ब्रिटिश सरकार के प्रति वफादारी जिससे की सरकारी कार्य बिना बाधा के सुचारू रूप से चलते रहे आदि विफलता के प्रमुख कारण रहे।

भारत छोड़ो आंदोलन आजादी का आखिरी संघर्ष क्यों ?

इस आंदोलन में लाखों भारतीयों ने हिस्सा लिया जिसका स्वरूप बहुत व्यापक था। जनमानस के मन में एक जबर्दस्त जोश और एकजुटता का भाव था और लक्ष्य था, ''स्वतंत्रता'' जिससे ब्रिटिश हुकूमत की जड़ें हिल गई और उन्हें अहसास हो गया कि भारत पर शासन करना अब उनके लिए दुष्कर कार्य है। यद्यपि की इस आंदोलन का दमन कर दिया गया परन्तु लॉर्ड लिनलिथगो की जगह 1943 में भारत के नए वाइसराय आए लॉर्ड वेवेल ने अपनी योजना 'वेवेल योजना' सामने रखी और इस पर वार्ता के लिए कांग्रेस के सभी नेताओं को जेल से रिहा किया गया। इसकी बैठक वेवेल के द्वारा शिमला में बुलाई गई जो कि 25 जून से 14 जुलाई 1945 तक चली परन्तु गांधीजी ने इस बैठक में हिस्सा नहीं लिया एवं कांग्रेस प्रतिनिधिमंडल में दो मुस्लिम सदस्य अबुल कलाम आजाद एवं खान अब्दुल गफ्फार खाँ ने उसमें भाग लिया। मो. अली जिन्ना के द्वारा उनका विरोध किया गया, क्योंकि उनके अनुसार मुस्लिम प्रतिनिधि चुनने का अधिकार सिर्फ मुस्लिम लीग को था एवं इस तरह यह वार्ता भी असफल हो गई।

उसके बाद 1946 में कैबिनेट मिशन का प्रस्ताव भी आया पर यह भी नकारा गया और अंत में माउंटबेटन योजना के तहत भारत को 15 अगस्त 1947 को आजादी मिल गयी और 26 जनवरी 1950 को भारत में औपचारिक तौर पर गणतंत्र लागू किया गया।

इस तरह गांधीजी का 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के संदर्भ में कहा गया यह वाक्य उनके जीवन का अंतिम संघर्ष बन गया :

''मैं स्वतंत्रता के लिए अब और आगे प्रतीक्षा नहीं कर सकता। मैं मि० जिन्ना के हृदय परिवर्तन की भी राह नहीं देख सकता। यदि मैं और रूकूंगा तो ईश्वर मुझे दंड देगा। यह मेरे जीवन का अंतिम संघर्ष है।''

(लेखक गांधी स्मृति एवं दर्शन
समिति के प्रशासनिक अधिकारी हैं।)

भारतीय आदिवासी महिलाओं की दुर्दशा

पूनम पांडे

अभी दो दिन पहले ही एक समाचार पढ़ा कि आदिवासी महिलाएं जिनमें किशोरियां भी हैं वो अपना काम काज और सांस्कृतिक संसार त्याग कर बर्तन मांज रही हैं इस तरह वो अपना परिवेश त्याग कर पहनावा, संगीत व्यंजन, त्योहार सब भूल गई हैं। मुंबई, दिल्ली, हैदराबाद, सूरत, चंडीगढ़ सहित महानगरों में दिहाड़ी करती इन आदिवासी महिलाओं की आबादी लाखों तक पहुंच गई है। इनके पलायन का सबसे बड़ा कारण भुखमरी है। सच यह है कि पकाकर खाने को जानवर अब आसानी से उपलब्ध नहीं होते। नदियाँ सूख गई तो अनाज कैसे पैदा करें। जंगल के लगातार कम होते रकबे की वजह से यह हाल पूरे भारत के आदिवासियों व अन्य समुदाय की एक बड़ी आबादी का है कि वो भूख, गरीबी और बेकारी का शिकार है। वैसे तो जंगली इलाकों के बारे में लोगों का मानना है कि जिस इलाके में आज भी भरपूर जंगल है, वहाँ भूख से कोई नहीं मर सकता है। लेकिन साथ में हकीकत यह भी है कि विभागीय उदासीनता, कर्मचारियों की मिलीभगत व आदिवासी समुदायों में जागरूकता की कमी के कारण आज पूरे संथाल परगना में वन माफियाओं द्वारा जंगलों की अवैध कटाई जारी है। जंगलों की लगातार हो रही अवैध कटाई से पर्यावरण संतुलन बिगड़ रहा है। पर्यावरण संतुलन बिगड़ने से लोग बीमारी और भूखमरी का शिकार हो रहे हैं। वनों के घटते रकबे का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि पहले हर आदिवासी बहुल राज्य में जंगल थे वहां अब किसी जिले में कुछ जंगल रह गये है और देश में लगभग दो सौ नब्बे हजार हेक्टेयर यानि बयानवे प्रतिशत जंगलों का सफाया हो चुका है।

नई-नई बीमारी जो आदिवासी महिलाओं ने देखी न थी वो उनको रोगी बना रही हैं। पहले तो बुखार, सर दर्द, जुकाम, खांसी, हड्डी टूटना तक आदिवासी महिलाएं अपने स्तर पर सुधार लेती थीं। पर अब कोई ऐसी जानकार महिला रही नहीं।

वैसे तो जंगली इलाकों के बारे में लोगों का मानना है कि जिस इलाके में आज भी भरपूर जंगल है, वहाँ भूख से कोई नहीं मर सकता है। लेकिन साथ में हकीकत यह भी है कि विभागीय उदासीनता, कर्मचारियों की मिलीभगत व आदिवासी समुदायों में जागरूकता की कमी के कारण आज पूरे संथाल परगना में वन माफियाओं द्वारा जंगलों की अवैध कटाई जारी है।

इसके कारण कई बीमारियों का इलाज जो पहले यह महिलाएँ खुद से कर लिया करती थी, अब इसके लिए उन्हें नीम-हकीम, झोला छाप डॉक्टरों या फिर बड़े डॉक्टरों से इलाज के लिए दूर चलकर शहर जाना पड़ता है। मुद्दे की गहराई में जाकर देखें तो इसके और भी कई पहलू हैं। पहले वन आधारित कई कुटीर उद्योग भी इस इलाके में चला करते थे जिसमें बड़े पैमाने पर लड़कियाँ शामिल रहती थीं। आज वे कुटीर उद्योग लुप्त हो रहे हैं। लुप्त होने वाले उद्योग में मधुमक्खी पालन खास है। यह सारे भारत मे आदिवासी समाज को आर्थिक रूप से मजबूत बनाता था पर अब यह लगभग खत्म है। इसके अलावा तेंदू पत्ता, तसर, लाख और सवई घास, मछली पालन प्रमुख थे जो अब तकरीबन समाप्त हो गए हैं। इन उद्योगों के बर्बाद होने से आदिवासी महिलाओं के सामने बरोजगारी की समस्या भी खड़ी हो गई है।

भारत में महिलाएं आदिवासियों की कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा हैं। और पुरुषों की तुलना में कम साक्षर हैं। इसके अलावा, वे प्रजनन स्वास्थ्य से संबंधित कई समस्याओं का सामना करते हैं। प्राथमिक और माध्यमिक निर्वाह गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए, भारतीय आदिवासी महिलाएं पुरुषों की तुलना में कड़ी मेहनत करती हैं। विभिन्न आदिवासी समाजों में आदिवासी महिलाओं की स्थिति में उतार-चढ़ाव आता है।

इस प्रकार के उपरोक्त हालात को देखते हुए प्रकृति से महिलाओं के विशेष रिश्ते को नकारना मुश्किल है। पूरे भारत में वन क्षेत्र का नया नक्शा बनना चाहिए ताकि आमलोगों को पता चल सके किस गाँव में कहाँ कितना जंगल है। लेकिन ऐसा नहीं हो रहा है। वनाधिकार कानून के क्रियान्वयन की स्थिति भी किसी से छिपी हुई नहीं है। परिणामतः जंगल का विनाश जारी है जिससे आदिवासी समाज खासकर लड़कियों व महिलाओं का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है। इसलिये वो हर रोज चार सौ रुपया कमाकर दो समय खाकर जीवित रहना चाहती है।

भारत में महिलाएं आदिवासियों की कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा हैं। और पुरुषों की तुलना में कम साक्षर हैं। इसके अलावा, वे प्रजनन स्वास्थ्य से संबंधित कई समस्याओं का सामना करते हैं। प्राथमिक और माध्यमिक निर्वाह गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए, भारतीय आदिवासी महिलाएं पुरुषों की तुलना में कड़ी मेहनत करती हैं। विभिन्न आदिवासी समाजों में आदिवासी महिलाओं की स्थिति में उतार-चढ़ाव आता है। पारिस्थितिक क्षेत्रों में भारतीय आदिवासी महिलाओं की स्थिति का पता लगाने के लिए, उनकी स्थिति को बेटी, अविवाहित महिला, विवाहित महिला, विधवा, तलाकशुदा और बांझ महिला के रूप में विभाजित किया जा सकता है। आर्थिक, सामाजिक और घरेलू गतिविधियों में महिलाओं का कार्य महत्वपूर्ण है। जंगलों का कटना, आधुनिक विकास, तकनीक, भोजन की कमी और आर्थिक परिवर्तन पुरुषों और महिलाओं को विविध तरीकों से प्रभावित करते हैं। आधुनिकीकरण की नई लहर के कारण भारतीय आदिवासी युवतियों ने अपनी विरासत खो दी है ।

पहनावे, औजारों और संसाधनों में अनिवार्य रूप से पारंपरिक यह महिलाएं अब एकदम अजीब लग रही हैं। जड़ी, बूटी, औषधि, दुर्लभ अचार बनाने की यह कला अब लगभग खत्म हो जायेगी। यों तो आदिवासी हाट बाजार की परिकल्पना ने कुछ आदिवासी महिलाओं को जंगलों मे बस्ती बनाकर खुश और संतुष्ट रखा है मगर अपनी किसी सखी को महानगर से लौटकर वहां की चकाचौंध भरी कहानी सुनाते देख वो भी अपना टिकट कटा कर बस में बैठने को लालायित हो ही जाती है ।

आज लाखों की जनसंख्या वाला आदिवासी समाज जो कि अनोखी जीवन शैली लिये है वो बिलकुल ही कंक्रीट प्रेमी हो रहा है। उनको पशु-पक्षी, पेड़-पौधे अब आकर्षण का केंद्र या अपने से नहीं लगते। इनको इस हालत में देखकर याद आया कि न्यूजीलैंड की माओरी संस्कृति भी ऐसे ही खत्म हो गई। आज न्यूजीलैंड यह उल्लेख करते हुए संकोच करता है कि माओरी वहां की

मूल जनजाति है, परंतु अपनी संस्कृति से दूर होने के कारण यह जनजाति आज न्यूजीलैंड में केवल कथा और कथानक के रूप में जीवित रह गई है। लग रहा है कि ऐसा भारत में न हो जाये, इसके लिए हमें मिलकर प्रयास करना होगा। अंडमान निकोबार की जारवा जनजाति आज विलुप्त होने के कगार पर है और उनकी संस्कृति समाप्त हो रही है। यह पूरे आदिवासी समाज के लिए चिंतन और चिंता का विषय है।

हम सबको अपने स्तर पर आवाज उठाकर आदिवासी परंपरा को संरक्षित करने के उपाय भी करना है, क्योंकि हमारी संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज और संस्कार ही हम आदिवासियों की पहचान है।

जब हम अपनी संस्कृति और संस्कारों के संरक्षण के प्रति गंभीर होंगे तभी हम अपने अनुभव जनित ज्ञान को बचाने के उपाय करेंगे। हमारा अनुभव जनित ज्ञान किसी शोध और विज्ञान से कम नहीं है। आदिवासी समाज की सबसे बड़ी विशेषता उसकी प्रकृति से समीपता है। प्रकृति में होने वाले भूकंप, तूफान आदि हमें पहले ही पता चल जाता था। आज भी ऐसे लोग हैं जो अनुमान के आधार पर बहुत कुछ जान सकते हैं। यह आदिवासियों के श्रेष्ठ बौद्धिक स्तर को बताता है। विकास के साथ जुड़ने के साथ ही हमें अपने समाज की मान्यताओं, संस्कारों, रीति रिवाजों, ज्ञान और अनुभव को लिपिबद्ध करने का संकल्प लेना होगा। तभी हम अपनी आदिवासी संस्कृति से न्याय कर पाएंगे।

संपर्क:

मो. 9828792720

अनुपम त्रिपाठी की कविताएं

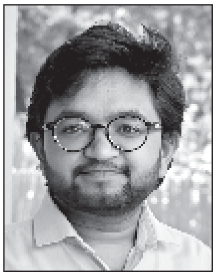

बंटवारा

सुना है
जब दुनिया बन रही थी
तब सबके हिस्से कुछ न कुछ आया था।
खरगोश के हिस्से फुर्ती आयी थी
चिड़िया के हिस्से पंख
गिलहरी के हिस्से मासूमियत और
कबूतर के हिस्से चुप्पी।
उल्लू के हिस्से रात और मुर्गे के हिस्से सुबह।
जैसे पाठक के हिस्से किताब और
गायक के हिस्से संगीत आया
मेरे हिस्से आई
उदासी
और कमजोर बारहखड़ी के
कुछ कमजोर स्वर-व्यंजन।

शांति दूत

शांति में
तार पर बैठा शांति दूत कबूतर
मारा गया।
तार पर जो और थे पक्षी
वे उड़ गए
किन्तु यह न उड़ा
डटा रहा।
यह न था कोई योग
था अंतिम सत्य का प्रयोग।
उसने देखा:
बंदूक थामें हाथ को
अपने उपर लगे साध को
ट्रिगर पर दबती ऊँगली
और धाँय से आती गोली।
उसने यह भी देखा
कि बंदूक एक
ट्रिगर एक
बंदा एक, उंगलियां अनेक।
लेकिन वह डरा नहीं
तार से हिला नहीं
यह अंतिम प्रयोग हारा गया
सबने देखा, वह मारा गया।

कई दिनों तक
लाश सड़ती रही
गाड़ियाँ गुजरती रहीं।
जिसने इसे हत्या कहा
वह मारे गए
जिसने वध कहा
वह पूजे गए।

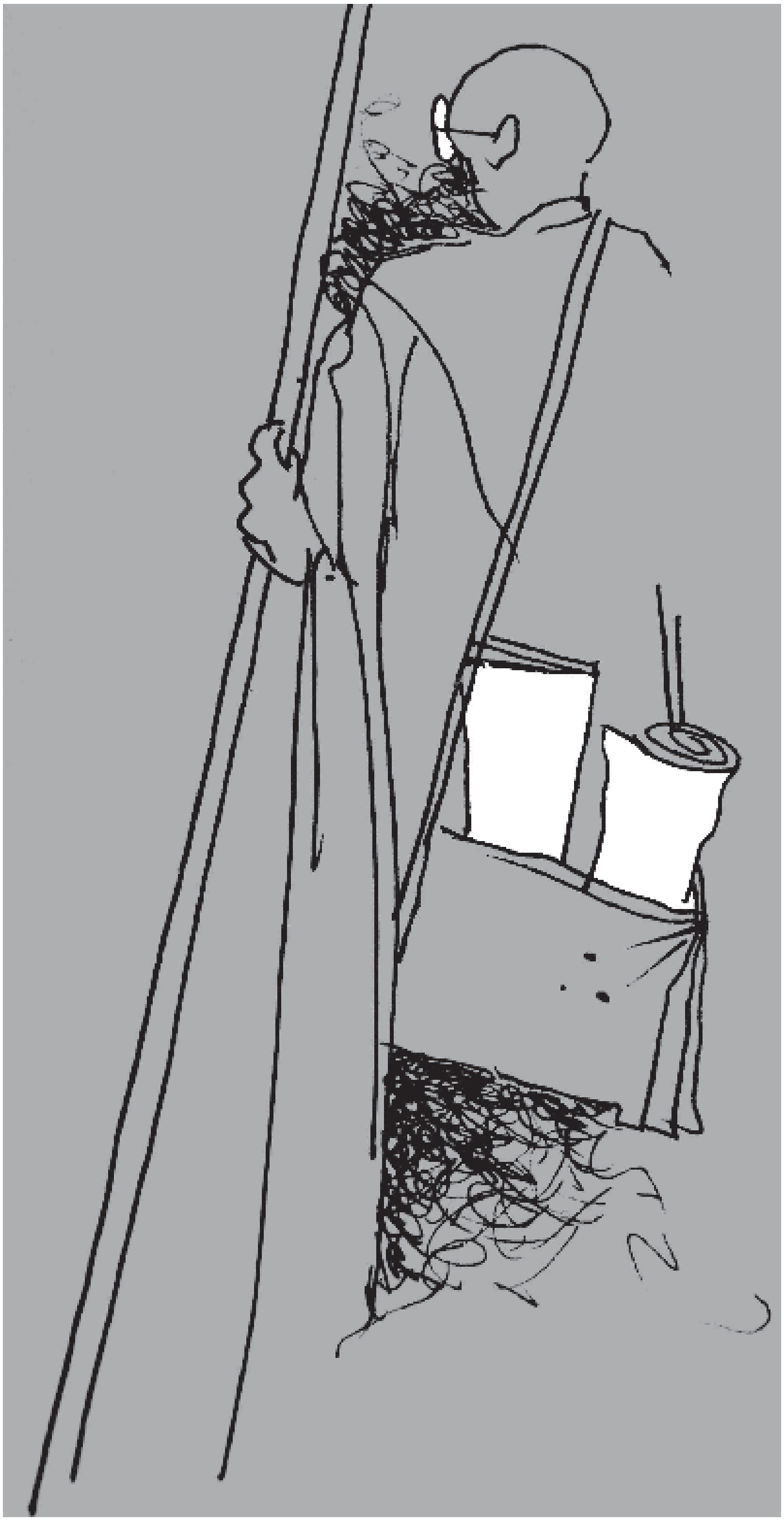

विस्थापन

घर में एक बाल्टी है लोहे की
मेरी उम्र से पुरानी
कितनी ही बार उसमें पानी भरकर नहाया
उसके दीवार पर लिखा है : 19.10.1989

एक कजरौटी है
जिसे देखकर भाग जाया करता था बचपन में
अब मैं नहीं घर के बच्चे भागते हैं उसे देखकर
उसकी पूंछ में एक मोर है जो पंख नहीं फैलाता
उड़ता भी नहीं
लेकिन इया कहती थी कि जो बच्चे काजल नहीं
लगवाते
मोर उनकी आंखें ले जाता है
अब चूंकि मैं समझ गया हूं मोर और दादी के बीच के
सच को
तो मैं इसे खजाने की तरह बचाकर रखता हूं
कि इसी तरह सही लेकिन घरों में बच्चों को काजल
लगाने के लिए दादी नानी का होना जरूरी है।

एक दूध का पतीला भी है
जाने कितने समय से उसमें उबल रहा है दूध
उसकी पेंदी में कभी कोई सुराख नहीं हुआ।

एक पंखा है जो धीरे धीरे चलता है
उसकी गति में कोई बदलाव नहीं देखा
यह किसी ने किसी की स्मृति में हमें दिया होगा
इसकी एक पंखड़ी पर लिखा है बी. बी. लाल शांति
देवी...
सो मैंने एक दिन पंखे का नाम ही रख दिया बी बी
लाल शांति देवी।
पंखा जब खराब हो जाता या रुक जाता

तो हम कहते, बी बी लाल बीमार हो गया।

घर में कई चीजें ऐसी हैं जिन्हें बचपन से देखता आ रहा
हूं
कई बार लगता है कि घर के लोगों से ज्यादा मैं घर की
वस्तुओं को जानता हूं...
जाने क्यों मुझे लगने लगा है कि
विस्थापन की मार मनुष्यों को ही नहीं
घर की वस्तुओं पर भी पड़ती है
दुख उन्हें भी होता है
अपने देस के छूटने का।

बेरोजगार लड़के

नौकरी के हर इश्तहार को ध्यान से देखते हैं
और अच्छी तरह तैयार होकर, बहुत से मान्यता प्राप्त
सर्टिफिकेट लेकर निकलते हैं बेरोजगार लड़के
जो जूता घर से चमकाकर निकलते हैं
बाहर निकलते ही उनपर धूल चढ़ जाती है

वे हर जगह प्रयास करते हैं
और सब कुछ सीखते हैं
लेकिन सब कुछ सीखते रहने और प्रयास करते रहने में
बढ़ती जाती है उम्र
लगातार मिलती असफलता से थकते जाते हैं वे
और जब कुछ नहीं मिलता है उन्हें तो सड़कों की
दीवारों खंभों पर लगे पोस्टर देखते हैं वो
'जरूरत है हेल्पर की'
'पार्ट टाइम जॉब: कमाएं तीन हजार से दस हजार रोज,
फुल इंजॉयमेंट के साथ'
'आवश्यकता है पैंपलेट बांटने वाले योग्य व्यक्ति की'

वे अपने काबिल दोस्तों को देखते हैं घर लेते हुए, गाड़ी लेते हुए, घूमने जाते हुए, शादी रचाते हुए, मां बाप को तीर्थ भेजते हुए
और बढ़ती जाती है उनके कामयाब होने की इच्छा- हा!

वे नहीं उतर पाते हैं पिता के सपनों पर खरे
वे फैमिली के साथ बैठकर नहीं देखते टीवी
इस भय से कि
कहीं किसी लायक बेटे का जिक्र न आ जाए
जो नौकरी पाते ही मां बाप के कदमों में घर गाड़ी लाकर रख दे

छूटते जाते हैं उनके बहुत पक्के दोस्त
उन लड़कियों की शादी होती जाती है जिनसे उन्होंने खूब प्यार किया
सब आगे बढ़ते जाते हैं
पीछे रह जाते हैं बेरोजगार लड़के

सबसे अधिक सपने देखते हैं वे
उम्र बढ़ने के साथ साथ बढ़ती जाती है उनकी नींद
दूर दूर, अकेले अकेले रहते हैं
घर के कोने में पाए जाते हैं
या छत की मुंडेर पर किसी ऊंची उड़ती हुई पतंग को देखते हुए, उठते-उड़ते-कटते हुए

बेरोजगार लड़कों को आता है इंतजार करना
अदभुत होती है उनकी सहनशक्ति
और जब कभी लग जाती है उनकी नौकरी
तब सब कुछ सुनते हुए भी चुपचाप करते जाते हैं नौकरी
इस डर से कि कहीं फिर न हो जाएं बेरोजगार

बेरोजगार लड़के

संपर्कः
बी-55, ब्रिज विहार, नियर मुस्कान पब्लिक स्कूल, साहिबाबाद-201011
मो. 8527826509

इकबाल अहमद की कविता

अभिशप्त

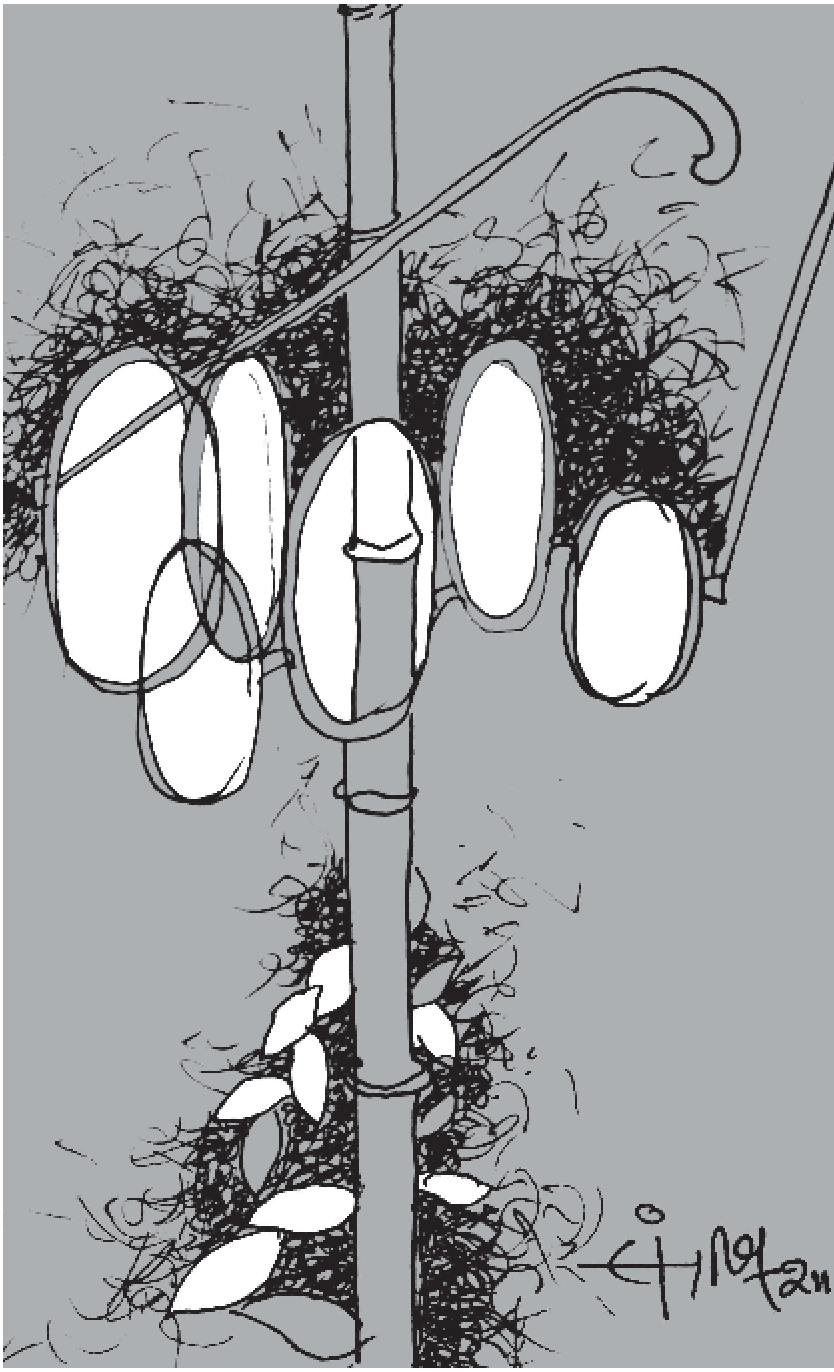

प्रिय!
अभिशप्त हूं।
गहरे सागर में रहूं
न तृष्णा शांत करूं
तपती मरूभूमि में चलूं
न गंतव्य पार करूं
चलता रहूं अविचल, अविरल
कैसी यह अभिलाषा
प्रिय!
अभिशप्त हूं
मंदाकिनी से नीला अंबर
नीले नभ से आगे क्या
सागर के धरातल पर
धारा बन लहराता क्या
अंतरिक्ष के शून्य में
क्या है विद्यमान
कैसी यह जिज्ञासा
प्रिय!
अभिशप्त हूं
तू अनुपमा दिग्दर्शिता
तू अद्वितीया प्रतिदर्शिता
तू कांति प्रतिलक्षिता
तू शांति प्रतिरक्षिता
तू विचार कर
मेरे विचार पर
कैसी यह परिभाषा
प्रिय!
अभिशप्त हूं।

(कवि संस्कृति मंत्रालय के राजभाषा विभाग में परामर्शदाता हैं।)

कार्टून में गांधी

OF SWADESHI

GANDHI'S PERSONAL TEN COMMANDMENTS FOR HIS OWN GUIDANCE—
1. Truth.
2. Love.
3 Chastity
4. Restraint of the Appetites
5. Possession only of essentials
6. One's Bread must be earned by the sweat of one's brow
8. Equality of Mankind

बाल कहानी

गड़बड़- सड़बड़

क्षमा शर्मा

अंशु नल के नीचे हाथ धोने को हुआ तो बोला–ओह इता ठंडा पानी। सरदी थी, स्कूल बंद थे। कल उसने टी वी पर बर्फ के गोलों को एक–दूसरे पर फेंकते लोगों को देखा था। तो उसने सोचा न सही बर्फ, पानी ही सही। उसने अखबार पढ़ती मम्मी पर पानी फेंका तो वह चिल्लाई–अंशु, इतनी ठंड में पानी छिड़क रहे हो। यह कौन सा खेल है भाई।

वही तो जो सब कल मनाली में खेल रहे थे, बर्फ फेंककर। टी वी में देखा था न। मुझे भी खेलना है और अभी खेलना है। उसने इठलाते हुए और जिद करते हुए कहा।

वो खेल रहे थे, तो खेलने दो। कोई पागलपन करे तो क्या तुम भी करोगे। मम्मी बोलीं।

पागलपन, बर्फ फेंकना पागलपन। और यह पागलपन क्या होता है। अंशु ने खुद से ही पूछा।

यों तो उसे लगा कि पापा पर भी पानी फेंककर देखे, लेकिन अगर वह नाराज हो गए तो। हालांकि ऐसा बहुत कम होता है कि वह अंशु की बात पर नाराज होते हों। लेकिन अगर हो गए..। अंशु ने आइडिया छोड़ दिया। फिर वह सोचने लगा कि खुद पर ही पानी डालकर देखेगा। और इस साल तो नहीं बस अगले साल तो अड़ ही जाएगा कि वह भी मनाली या ऐसी ही किसी जगह पर जाएगा, जहां बर्फ के गोले बनाकर खेल सके। बस वह पानी से खेलने की कोशिश करने लगा। लेकिन यह क्या नल के नीचे जैसे ही हाथ किया, ठंड लगने लगी। ऐसा लगा जैसे दांत किटकिटाने लगे हों।

तभी पापा की आवाज सुनाई दी–अरे, ये चम्पा के पेड़ को क्या हो गया। उनकी बात सुनकर अंशु किचन की तरफ दौड़ा। वहां खिड़की से चम्पा का पेड़ दिखाई देता था। उस पर बैठी चिड़ियों की ओर इशारा करके मम्मी उसे बताती थीं–देखो अंशु, आज वहां दो तोते बैठे हैं। गिलहरी को तो देखो कैसे हुड़दंग मचा रही है। कभी ऊपर कभी नीचे। जैसे एक–दूसरे को दौड़ में पछाड़ रही हों। और भला ये गुरसलें, जब देखो तब लड़ती रहती हैं।

किस बात पर लड़ती हैं। उसने मम्मी से पूछा तो वह बोली थीं–तू उन्हीं से पूछ ले।

मैं कैसे पूछूं। मेरी बात उनकी समझ में आ जाएगी। और जब वो बताएंगी तो मैं कैसे समझूंगा। क्या बताएंगी, कैसे पता चलेगा।–अंशु ने कहा ।

ले वैसे तो तू बिना बताए ही सबके मन की बात पता कर लेता है कि कब टीचर तुझसे पोइम सुनाने के लिए कहेंगी, कब मैं तुझसे सोने के लिए, कब पापा खेलने के लिए। कहते हुए मम्मी मुसकराने लगीं।

अंशु चम्पा के पेड़ को देखते हुए तमाम पुरानी बातें सोच रहा था, मगर उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर पेड़ को क्या हुआ है। उसने मम्मी से पूछा क्या हुआ इसे। तभी उसे जोर से बोलते दो कौओं की आवाज सुनाई दी।

–अरे, पूछ रहे हो क्या हो गया। दिखाई नहीं दे रहा। ऊपर पत्तों की छतरी सी तनी है, बाकी पत्ते कहां गए। कल तक तो थे। कहां गए होंगे पत्ते। कौन तोड़ ले गया होगा।–अंशु ने फिर पूछा।

पता नहीं इन्हें तोड़कर कोई क्या करेगा। ये कौन से बेलपत्र के पत्ते हैं जो पूजा के काम आएंगे।–मम्मी कह रही थीं। तो फिर, हो सकता है माली ने तोड़ लिए हों।–अंशु सोचते हुए बोला।

–हां माली तोड़ सकता है । मगर वह इतने थोड़े ही तोड़ेगा कि पूरा का पूरा पेड़ खाली हो जाए।

मैं देखकर आता हूं। कहता हुआ अंशु बाहर की

तरफ दौड़ा कि पीछे से पापा की आवाज सुनाई दी–कहां जा रहे हो अंशु।

–देखने कि चम्पा के पत्ते कौन तोड़ ले गया।

–अच्छा तो क्या तोड़ने वाला नीचे ही खड़ा होगा अब तक।

–क्या पता खड़ा हो।

–ठीक है तो जरूर जाओ। और मिल जाए तो बताओ। हम भी तो देखें कौन हमारे चम्पा के पत्तों को तोड़कर उसे तकलीफ पहुंचा रहा है। तुम्हें पता है जब पेड़ों के पत्ते तोड़े जाते हैं, तो वे भी दर्द से चीखते–कराहते हैं।

तो जब चम्पा चीखा था हमें क्यों नहीं पता चला।–अंशु ने पूछा।

क्योंकि हम उसकी भाषा नहीं जानते। वह कब रोता–गाता है, हमें नहीं पता।–पापा बोले।

दूसरे पेड़ों को पता चल गया होगा, जब वह रोया होगा। वे जानते हैं, उसकी भाषा।–अंशु के हजार सवाल थे।

–हो सकता है जानते हों।

अंशु नीचे चम्पा के पेड़ के पास पहुंचा। उसे वहां कोई दिखाई नहीं दिया। उसने पेड़ के तने को प्यार से सहलाया। बोला–तुम्हें बहुत दर्द हुआ था, जब तुम्हारे पत्ते तोड़े गए थे। मगर तुमने मुझे क्यों नहीं बताया। हमारी किचन की खिड़की के सामने ही तो तुम लगे हो। मुझे बुलाते तो फौरन दौड़ा आता। फिर देखता कि कैसे कोई तुम्हें तंग करता है।

अचानक ऊपर लगी पेड़ की डालियां हिलीं तो अंशु को लगा, वे उसकी बात पर खुश हो रही हैं। डांस कर रही हैं। अंशु ने उनका इस तरह से हिलना, डुलना देखा तो वह भी डांस करने लगा।

सामने माली भइया पौधों को पानी दे रहे थे। उन्होंने अंशु को नाचते देखा तो बोले–क्या मिल गया भइया जो नाच रहे हो। जरूर इम्तिहान में अच्छे नम्बर आए हैं।

मिला कुछ नहीं, और अभी तो इम्तिहान ही नहीं हुए, नम्बर कहां से आएंगे। चम्पा का पेड़ नाच रहा था, तो मैं भी नाचने लगा।

लो भइया तुम्हें ये पेड़ भी नाचता दीख गया। कहकर माली भइया जोर से हंसे–तुम बच्चों की लीला ही निराली है।

–भइया, इस चम्पा के पेड़ के पत्ते कहां गए। आपने तोड़े हैं।

–हम क्यों तोड़ेंगे। तुम्हें मालूम नहीं है, सोसाइटी में कई बंदर आ गए हैं। कल उन्होंने बिना बात इस पेड़ पर इतना उत्पात मचाया। जब तक हम भगाएं, तब तक तो सारे पत्ते नोंचकर नीचे फेंक दिए।

–क्यों फेंके।

अब ये हम क्या बताएं। मिलेंगे तो पूछ लेंगे।–कहकर हंसते हुए माली भइया खुरपी लेकर आगे चले गए।

ये बंदर कहां से आ गए। अंशु को याद आया उसकी दोस्त सुनेत्रा के पीछे एक बार बंदर भागा था। सामने से आते एक साइकिल वाले अंकल ने बंदर को भगाया था। वरना तो वह काट ही लेता।

अंशु घर की तरफ लौट रहा था कि अचानक उसने पीली, सफेद बिल्ली को घास पर बैठे देखा। उसका छोटा सा बच्चा भी उससे सटकर बैठा था। बिल्ली पूंछ हिला–हिलाकर उसे छू रही थी। घास गीली थी। तो बिल्ली को ठंड क्यों नहीं लग रही। और उसका बच्चा तो इतना छोटा है, उसे भी ठंड नहीं लग रही, क्यों। अंशु ने सोचा जब बिल्ली और उसके बच्चे को ठंड नहीं लग रही, तो उसे भी नहीं लगेगी। वह भी पेट के बल घास पर लेट गया। कुछ देर तक तो उसे ठंड महसूस नहीं हुई। मगर जैसे ही घास का गीलापन कपड़ों के अंदर पहुंचा, ठंड लगने लगी। वह दौड़कर घर के अंदर पहुंचा। पूछा–मम्मी, पापा, घास पर लेटी बिल्ली को ठंड क्यों नहीं लग रही।

–अरे, तुम तो यह पता करने गए थे कि चम्पा के पेड़ के पत्ते किसने तोड़े।

–हां, वहां बंदर आ गए थे।

अंशु क्या हो गया, कभी बिल्ली, कभी बंदर। और ये स्वेटर पर इतनी घास कहां से लगा लाए। कल ही तो धुला हुआ पहनाया था। जरूर घास में लोट लगा के आए हो।–मम्मी नाराज हुईं।

अंशु क्या बताता । उसने शीशे में देखकर खुद को ही मुंह चिढ़ाया–ओफ ओह, ये मम्मी–पापा, इनके लिए जब देखो तब बच्चे ही कुछ न कुछ गड़बड़ करते हैं। गड़बड़, सड़बड़, सड़बड़, गड़बड़।

बाल कहानी

वैभव की मुश्किल

डॉ. रंजना जायसवाल

वैभव के फाइनल एग्जाम शुरू होने वाले थे वैसे वैभव पढ़ाई में बहुत अच्छा था। हर विषय में उसकी अच्छी पकड़ थी और उसके नंबर भी अच्छे आते थे पर उसे मैथ से बहुत डर लगता था। वह हमेशा सोचता था कि सारी पढ़ाई कर लूँ और मैथ को बाद में पढ़ लूँगा। पापा ने उसे इस बात के लिए कई बार टोका भी था।

"किसी चीज से भागने से मुश्किलें टल नहीं जाती बल्कि मुश्किलें बढ़ ही जाती हैं।"

पर वैभव को पापा की बात समझ में नहीं आती थी। उसके इम्तिहान शुरू होने में सिर्फ पन्द्रह दिन रह गए थे। उसने सारे विषयों की अच्छे से तैयारी कर ली थी। आज से वह मैथ की तैयारी शुरू करने जा रहा था। जब उसने मैथ की किताब को खोला तो उसे लगा मैथ का कोर्स तो बहुत बड़ा है और पन्द्रह दिन उसके लिए काफी कम है। इन पन्द्रह दिनों में बाकी विषयों को उसे बीच-बीच में दुहराना भी है। वैभव के डर के मारे हाथ-पैर फूलने लगे। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि मैथ का इतना सारा कोर्स और बाकी पढ़ाई को वह कैसे कंप्लीट करेगा।

वैभव एक अजीब सी उलझन में था। वह सर झुकाए बैठा हुआ था। रात के एक बज रहे थे। उसके कमरे की लाइट जलता देख पापा उसके कमरे में चले आए।

"क्या हुआ वैभव तुम अभी तक सोए नहीं?"

पापा ने वैभव से पूछा

"पापा! कुछ समझ में नहीं आ रहा।"

"क्या समझ नहीं आ रहा?"

वैभव ने सारी बात पापा के सामने खुलकर बोल दी। पापा भी चिंतित हो गए।

"मैं पढ़ाई कहाँ से शुरू करूँ, समझ नहीं आ रहा है। मैंने सोचा था कि मैथ सबसे अंतिम में करूँगा तो याद भी रहेगा और सबसे पहला पेपर भी उसी का है, पर मेरी कोई तैयारी नहीं है।"

पापा ने कड़क आवाज में कहा

"पहली बात तो ये मैथ याद करने की नहीं, रोज प्रैक्टिस करने की चीज है। तुम जितना इसकी प्रैक्टिस करोगे उतना ही तुम्हें मैथ के फार्मूले अच्छे से समझ में आएंगे।"

वैभव चुपचाप सर झुकाए पापा की बात सुन रहा था उससे अब गलती तो हो ही चुकी थी।

"तुम्हारे और विषय अभी तैयार हुए हैं कि नहीं?"

"मैंने सारे विषय तैयार कर लिए थे बस मैथ ही छोड़ दिया था कि उसे बाद में तैयार करूँगा।"

पापा चिंता में पड़ गए। पापा को अच्छी तरह से पता था वैभव की मैथ कमजोर है और उसने इस सब्जेक्ट को सबसे आखिरी के लिए छोड़ रखा था।

"यह तो तुम्हारी सबसे बड़ी गलती है जिस विषय में तुम सबसे ज्यादा कमजोर हो तुमने उसे ही आखिरी के लिए छोड़ रखा है जबकि ऐसे विषय जिन्हें समझने में वक्त लगता है उन्हें शुरू से पढ़ना शुरू कर देना चाहिए। शुतुरमुर्ग खतरे के डर से अपना सर बालू में छिपा लेता है तो क्या उससे खतरा टल जाता है। तुमने भी शुतुरमुर्ग की तरह ही गलती की है।"

"पापा मुझसे अब गलती तो हो ही गई है। मुझे समझ में नहीं आ रहा अब मैं क्या करूँ। मैं पहला लेसन उठाता हूँ तो लगता है कि तीसरा लेसन इंर्पोटेंट है। तीसरा लेसन

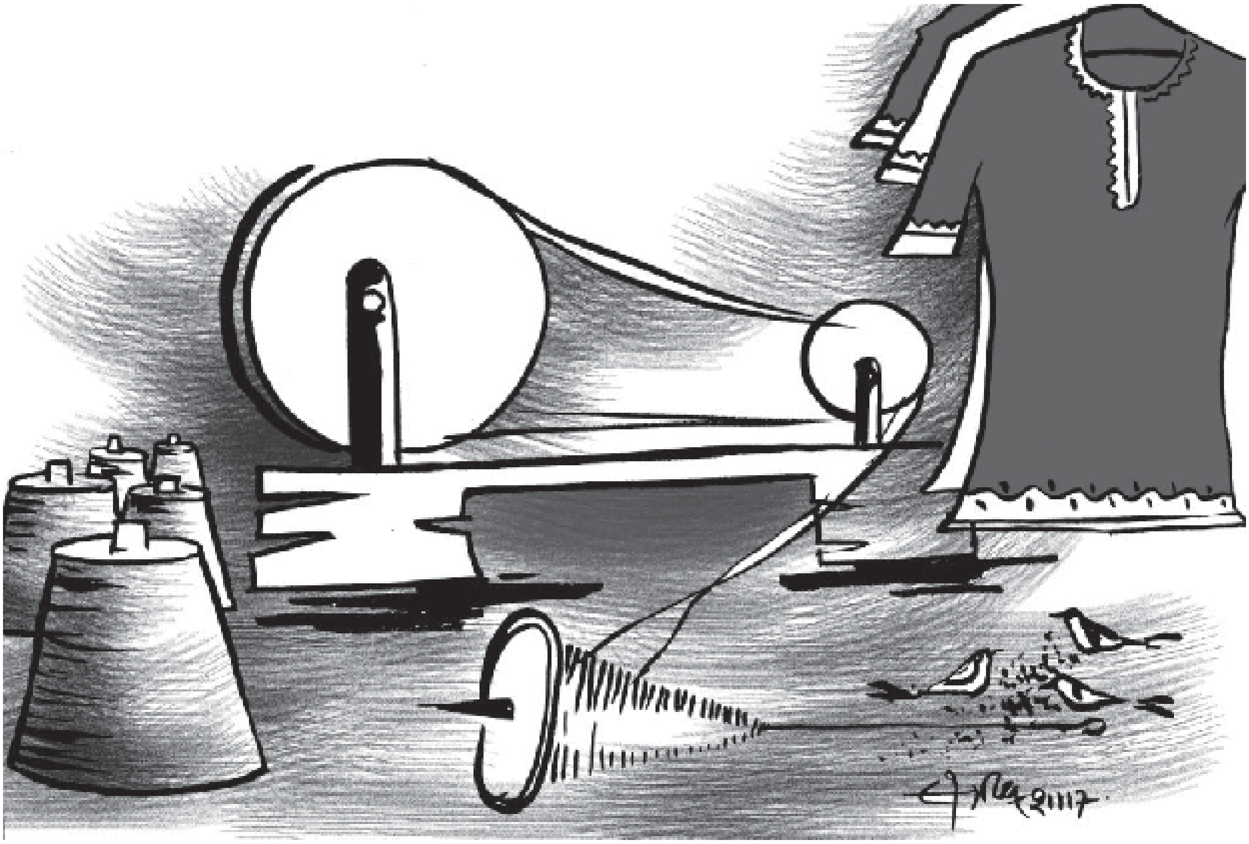

करना शुरू करता हूँ तो लगता है कुछ भी नहीं आता। मैं क्या करूँ। मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है।"

वैभव रुआंसा सा हो गया। पापा ने उसकी किताबें ली और वैभव से पूछा "इस पूरी किताब में तुम्हें कौन-कौन से लेसन ऐसे लगते हैं जो तुम आसानी से कर सकते हो?"

"पापा! इस वक्त तो मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है।"

घबराहट से वैभव के हाथ पैर-ठंडे हो गए थे। पापा ने उसके हाथों को लेकर कहा "घबराने की जरूरत नहीं है अब जो हो गया सो हो गया। अब आगे की सोचो जब पानी गंदा हो तो उसे हिलाते नहीं बल्कि उसे वैसे ही शांत और स्थिर होने के लिए छोड़ देते हैं। जिससे गंदगी अपने आप नीचे बैठ जाती है। इसी प्रकार जीवन में परेशानी आने पर चैन होने के बजाय शांत रहकर सोचने और विचार करने की जरूरत होती है। क्योंकि कोई भी समस्या इतनी बड़ी नहीं होती जिसका हल ना निकाला जा सके। तुम्हारी भी समस्या इतनी बड़ी नहीं है कि हल ना निकले। तुम्हारी समस्या का भी हल जरूर निकलेगा।"

"मैं आपका मतलब नहीं समझा।"

"तुम्हारे पास वक्त की कमी है। ऐसा है पिछले साल के पेपर्स को निकाल कर देखो और तुम्हारे टीचर ने कौन-कौन से लेसन को इंपॉर्टेंट बताया है अब इस पर ध्यान दो। तुम्हारा समय भी बचेगा और तुम्हारी तैयारी भी ठीक से हो जाएगी।"

वैभव को पापा की बात कुछ हद तक समझ में आ रही थी।

"पापा आप कह तो ठीक रहे हैं।"

"पर इस बार जो गलती की है वह भविष्य में ना हो इस बात का ध्यान रखना। सभी कोर्स एक साथ पढ़े जाने चाहिए जिससे अंत में इस तरह की परेशानी का सामना न करना पड़े।"

"पापा आगे से मैं इस बात का ध्यान रखूँगा।"

वैभव को अपनी गलती का एहसास हो चुका था और उसने मन ही मन यह प्रण कर लिया था कि आगे से वह ऐसी गलती नहीं करेगा।

संपर्क:

लाल बाग कॉलोनी, छोटी बसही

मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश, पिन कोड 231001

मो. 9415479796

किताब

तुलसी और गांधी

डॉ. चंद्रपाल शर्मा

प्रोफेसर श्रीभगवान सिंह का ग्रन्थ 'तुलसी और गांधी' 'आद्योपान्त पढ़ लिया है। तुलसी मेरा प्रिय विषय है। अत: मैंने अनुरोध करके यह पुस्तक मंगवाई थी। लेखक ने तुलसी पर परम्परा से हटकर गम्भीर चिन्तन व विवेचन करते हुए आधुनिक युग को नूतन दिशा देने वाले गांधीजी के चिंतन से उत्तम ढंग से जोड़ा है। ग्रन्थ के अनुक्रम को देखने से ही चिन्तन की मौलिकता का आभास हो जाता है। रामचरितमानस गांधीजी की दृष्टि में सर्वोत्तम ग्रन्थ है, और उसमें प्रतिपादित रामराज्य गांधीजी के जीवन का एकमात्र लक्ष्य रहा है। गांधीजी रामचरितमानस को तुलसी की रामायण कहते हैं, और उसे संस्कारी ग्रन्थ मानते हैं। उनके मत से संसार की आधुनिक भाषाओं के साहित्य में उसके मुकाबले में कोई दूसरी किताब नहीं ठहरती ।

डॉ. भगवान सिंह ने अपने गम्भीर अध्ययन से कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष दिये हैं। यथा– "तुलसी रचित रामकथा आदि से अंत तक लोक और वेद जैसे दो तटबंधों के बीच प्रवाहित होती चलती है।'' ''समस्त अयोध्यावासी ही तो वह लोकमत है, जो शास्त्रोक्त मत की परवाह न करते हुए राम की अयोध्या वापसी का प्रबल पक्षधर है''। इनके मत से 'राम का पूरा जीवन ही समस्त सम्बन्धों के निर्वाह करने वाली लोकधर्मिता की जीवन गाथा है।''

मैंने लगभग चालीस वर्ष पूर्व 'दलित साहित्य के प्रथम कवि तुलसी' शीर्षक से एक निबन्ध लिखा था। इस पुस्तक को पढ़कर मुझे प्रसन्नता है कि प्रिय श्रीभगवान सिंह ने मेरे मत को पुष्ट तर्कों के साथ विस्तार दिया है। मैंने 'मानस की नारी' शीर्षक से भी एक लेख लिखा था। लेखक ने तुलसी की नारी की महत्ता का भी विशद् वर्णन किया है किन्तु वे एक बात पर शान्त हैं कि तुलसी जब किसी नारी की निन्दा करते हैं, तो नारी सामान्य की निन्दा करते हैं, किन्तु जब किसी नारी की प्रशंसा करते हैं तो नारी विशेष की करते हैं। यह भी सत्य है कि तुलसी की नारी–विषयक उक्तियों, संस्कृत के श्लोकों का भावानुवाद मात्र है और प्रसंगानुकूल है।

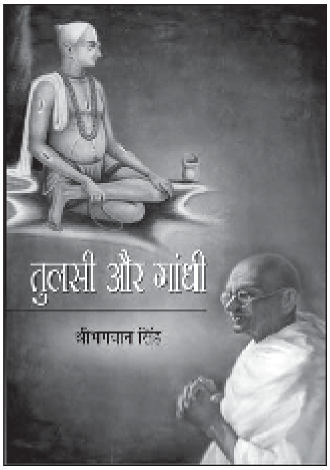

लेखक
श्रीभगवान सिंह

प्रकाशक
सामयिक प्रकाशन
दिल्ली

तुलसी के राज्य शासन–व्यवस्था सम्बन्धी विचारों का लेखक ने ऐसा सटीक विवेचन किया है, जो आज के राजनेताओं के लिए राजधर्म के समान है। दलित, उपेक्षित, पीड़ित, शोषित के प्रति गांधीजी के मन में जो लगाव था, उसकी प्रेरणा उनको तुलसी के ग्रंथ रामचरितमानस से मिली, इस तथ्य का प्रो. सिंह ने बड़े विस्तार से वर्णन किया है। अन्याय, अभाव, दमन, दलन, शोषण, दारिद्रय, अपमान आदि के शिकार व्यक्ति तुलसी व गांधी दोनों के प्रिय पात्र हैं, यह इस ग्रंथ में प्रतिपादित किया गया है।

वर्णाश्रम और सामाजिक समरसता पर विचार करते समय लेखक ने बताया है कि वर्ण–व्यवस्था कर्मणा से जन्मना बनने पर सामाजिक समरसता पर प्रहार हुआ है। उनके मत से तुलसी का बल जन्मना वर्ण–व्यवस्था पर नहीं, अपितु कर्मणा पर है। लेखक केवट, निषाद, शबरी आदि के उदाहरण देकर यह सिद्ध करता है ''हमारे सामाजिक जीवन में विद्यमान रही उस सहिष्णु संवाद–परम्परा का जिसके तहत एक मामूली आदमी की निर्भीक आवाज के सम्मान में राजपुरुष का अहं विसर्जित हो जाता था।'' लेखक की दृष्टि में 'निषाद–प्रसंग का सामाजिक सौमनस्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्व है।' लेखक की दृष्टि में कबीर, तुलसी, रैदास, नामदेव जैसे व्यक्ति सचमुच में दलित हैं जबकि आज के दलित कवि या लेखक अध्यापक हैं, पदाधिकारी हैं, डाक्टर या इंजीनियर है अथवा नेता या मंत्री हैं।''

'धर्म की सर्वोपरिता' का विवेचन करते समय लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि धर्म से आशय मत, सम्प्रदाय, या विश्वास न होकर स्वभाव व कर्तव्य से है। लेखक के मत से मैं पूर्णतः सहमत हूँ क्योंकि मैंने अपने लेख 'धर्म से आशय' में यह स्पष्ट लिखा है कि "किसी पंथ, संप्रदाय या उपासना पद्धति के लिए धर्म शब्द का प्रयोग उचित नहीं कहा जा सकता क्योंकि धर्म का क्षेत्र बहुत विस्तृत एवं व्यापक है। सृष्टि के मूल तत्त्व से लेकर मानव, जीव जगत, वनस्पति तक को धर्म ने अपने में समेटा है। यह गुण व गुणी का रिश्ता है।'' लेखक ने भी यही कहा है ''प्रत्येक पदार्थ में उसकी जो सत्ता है, जिसको स्वभाव भी कहते हैं, वही उसका धर्म है''। यदि आकाश का धर्म शब्द को वहन करना है, तो नमक का धर्म लवणता है और अग्नि का धर्म है उष्णता । इसी प्रकार मनुष्य का धर्म 'मनुष्यता' है। आज के इस संघर्षमय वातावरण में यदि मनुष्यता को मनुष्य के मूल धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया जाय, तो अनेक प्रकार के संकटों से विश्व को बचाया जा सकता है। प्रो० सिंह ने स्पष्ट घोषणा की है ''मात्र तप–साधना या वेद–पाठ करना ही धर्म नहीं है बल्कि पूरी तन्मयता से अपने लिए नियत कर्म का निष्पादन करने में ही सच्चा धर्म है।'' यदि मैं अपने शब्दों में कहूँ तो ''लोकमंगल अथवा लोक कल्याण जिस कार्य में निहित है, वह धर्म है और इस धर्म में समस्त मानवता के साथ जीव–जगत् मात्र समाहित हो जाता है।''

> ***वर्णाश्रम और सामाजिक समरसता पर विचार करते समय लेखक ने बताया है कि वर्ण–व्यवस्था कर्मणा से जन्मना बनने पर सामाजिक समरसता पर प्रहार हुआ है। उनके मत से तुलसी का बल जन्मना वर्ण–व्यवस्था पर नहीं, अपितु कर्मणा पर है। लेखक केवट, निषाद, शबरी आदि के उदाहरण देकर यह सिद्ध करता है।***

गांधीजी की धर्म सम्बन्धी मान्यताओं का, लेखक ने सप्रमाण वर्णन किया है। उनके ही शब्दों में:–''मैं जितने धर्मो को जानता हूँ, उन सब में हिंदू धर्म सबसे अधिक सहिष्णु है। इसमें कट्टरता का जो अभाव है, वह मुझे बहुत पसन्द आता है।"

समन्वय की अपरिहार्यता में लेखक ने अनेक स्थापित लेखकों के मतों का सतर्क विश्लेषण करते हुए विविध विषयों पर अपना निर्णायक मत दिया है। अन्त में मुझे यह कहने में संकोच नहीं कि रामकथा विषयक ग्रन्थों में 'तुलसी और गांधी' को महत्वपूर्ण स्थान मिलेगा और हिन्दी के जिज्ञासु पाठकों के लिए इस ग्रन्थ में अपार महनीय सामग्री है।

सम्पर्क:–सहयोग, सर्वोदय नगर, पिलखुवा– 245304
मो. 7668115170

गांधी क्विज–4

प्रश्न 1. महात्मा गांधी को सर्वप्रथम सुभाष चन्द्र बोस ने राष्ट्रपिता कहकर सम्बोधित किया था? उन्होंने यह सम्बोधन कहाँ दिया था?

1 रेडियो सिलोन
2 रेडियो श्रीलंका
3 रेडियो कुरुक्षेत्र
4 रेडियो रंगून

प्रश्न 2. महात्मा गांधी ने 'सत्याग्रह' का सर्वप्रथम प्रयोग कहाँ किया था?

1 चंपारण में
2 दक्षिण अफ्रीका में
3 लन्दन में
4 अहमदाबाद में

प्रश्न 3. भारत छोड़ो प्रस्ताव पारित होने के बाद गांधीजी को कैद करके कहाँ रखा गया था?

1 येरवडा जेल
2 आगा खाँ पैलेस (पुणे) में
3 तिहाड़ में
4 इलाहाबाद में

प्रश्न 4. गांधीजी ने अखिल भारतीय हरिजन संघ की स्थापना कब की थी?

1 1930
2 1931
3 1932
4 1933

प्रश्न 5. यंग इंडिया व हरिजन के सम्पादक कौन थे?

1 मनसुख लाल
2 महात्मा गांधी
3 बाल गंगाधर तिलक
4 हरिलाल

प्रश्न 6. महादेव देसाई के बाद गांधी जी का सचिव किसे बनाया गया था?

1 प्यारेलाल
2 अमृतलाल
3 लक्ष्मीकांत
4 आभा

प्रश्न 7. गांधी जी की अनुयायी मीरा बहन का वास्तविक नाम क्या था?

1 लेडी माउंट बेटन
2 एनी बेसेंट
3 मेडेलीन स्लेड
4 मनुबेन

प्रश्न 8. गांधी जी की आत्मकथा का अंग्रेजी में अनुवाद किस ने किया था?

1 काशीनाथ
2 जयप्रकाश
3 प्यारेलाल
4 महादेव देसाई

प्रश्न 9. गांधीजी की जीवनी 'सच के साथ मेरे प्रयोग' को मूलरूप से गुजराती में लिखा गया था। इसका हिंदी अनुवाद किसने किया?

1 हरिभाऊ उपाध्याय
2 मगनलाल
3 हरिसिंह
4 काशीनाथ त्रिवेदी

प्रश्न 10. गांधीजी जीवन में पहली बार जेल कब गए?

1 1908
2 1906
3 1907
4 1909

नोटः आप गांधी क्विज के उत्तर antimjangsds@gmail.com पर भेज सकते हैं। प्रथम विजेता को उपहार स्वरूप गांधी साहित्य दिया जायेगा।

रिपोर्ट

महात्मा गांधी एवं जाति का प्रश्न

यह अक्सर देखा गया है कि महात्मा गांधी के आलोचकों द्वारा उन्हें जाति-व्यवस्था के पोषक एवं समर्थक के तौर पर पेश किया जाता है। यह सच है कि गांधीजी बाबासाहब अम्बेडकर की भांति 'जाति प्रथा के सम्पूर्ण विनाश' की बात नहीं किया करते थे । परन्तु यह कहना कि वे समकालीन जाति-व्यवस्था को बनाए रखना चाहते थे, यह एक अधूरा सच है । इस संदर्भ में हाल ही में प्रख्यात भारतीय दार्शनिक **अकील बिलग्रामी** द्वारा 27 जून 2024 को नयी दिल्ली स्थित जवाहर भवन में 'अंडरस्टैन्डिंग गांधी ऑन कास्ट' पर दिया गया व्याख्यान महात्मा गांधी के जाति संबंधी विचारों पर नयी रोशनी डालता है ।

बिलग्रामी गांधी के जाति संबंधी विचारों को पूंजीवाद के जमीन पर खड़ी आधुनिक सभ्यता की उनकी आलोचना से जोड़ कर देखने का आग्रह करते हैं । बिलग्रामी के अनुसार गांधी जाति में तो विश्वास रखते हैं, परन्तु वे साथ ही इससे जुड़े पदानुक्रम अथवा ऊंच-नीच की भावना को सिरे से खारिज करते हैं । दूसरे शब्दों में, गांधी एक ऐसी आदर्श जाति-व्यवस्था की वकालत करते हैं जिसमें ऊंच-नीच का भेद न हो ।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि आखिरकार गांधी को जाति-व्यवस्था में ऐसी कौन सी खासियत दिखी जिसके चलते वे इसके सम्पूर्ण विनाश के पक्षधर न थे । बिलग्रामी के अनुसार इसके लिए हमें गांधीजी के सभ्यता संबंधी विमर्श को देखना होगा । गांधी का यह मानना था कि पूंजीवाद आधारित आधुनिक सभ्यता विविधता की शत्रु है। यह हमें एकरूप बना देना चाहती है जहाँ सब एक जैसा दिखें, एक जैसा बोलें, एक जैसा खायें, एक जैसा पहनें। गांधी के हिसाब से भारत जैसी प्राचीन सभ्यता एवं सामाजिक विविधता वाले देश के लिए यह हितकर नहीं है। ऐसे में गांधी को जाति-व्यवस्था विविधता के संरक्षण हेतु एक यथोचित उपक्रम प्रतीत होती थी, जिसमें प्रत्येक समूह समाज में योगदान देते हुए अपनी पृथक पहचान एवं संस्कृति बनाए रख सकता था ।

इसके साथ ही महात्मा गांधी पूंजी पर आधारित व्यवस्था के मुखर विरोधी थे । उन्हें पता था कि आधुनिक सभ्यता पूंजी केंद्रित है । ऐसे में वे जाति को एक वैकल्पिक व्यवस्था के तौर पर देखते थे जिसके निर्धारण में पूंजी की कोई भूमिका न थी । यहाँ यह गौरतलब है कि किसी जाति विशेष में जन्मा व्यक्ति कोई खास किस्म का कार्य सिर्फ आजीविका कमाने के लिए नहीं करता, बल्कि वह इसलिए करता है क्योंकि कुछ लिखित-अलिखित सामाजिक कोड उसे ऐसा करने हेतु प्रेरित करते हैं । उदाहरण के तौर पर एक ब्राह्मण पूजा-पाठ का कर्म मूलतः समाज की आवश्यकतानुसार करता है, न कि सिर्फ आजीविका कमाने के उद्देश्य से । दूसरे शब्दों में जाति कर्म आजीविका से ज्यादा एक खास किस्म की जीवन शैली को परिलक्षित करती है जिसके निर्धारण में पूंजी की भूमिका नगण्य होती है । इस संदर्भ में गांधीजी 29 दिसम्बर 1920 को यंग इंडिया में 'जाति बनाम वर्ग' शीर्षक से लिखे गये

अपने लेख में कहते हैं : 'जाति-प्रथा की खूबी इस बात में है कि इसका आधार धन नहीं है ।'

वहीं दूसरी तरफ, बिलग्रामी के अनुसार, गांधीजी किसी जाति विशेष के कर्म को महत्वहीन अथवा घृणित मानने की आलोचना करते हैं । उनके अनुसार प्रत्येक जाति कर्म का समाज की दृष्टि से समान महत्व है । दूसरे अर्थों में एक भंगी का कार्य ब्राह्मण के जाति कर्म से कहीं से भी छोटा अथवा महत्वहीन नहीं है । बल्कि, गांधीजी एक भंगी के कर्म को ब्राह्मण के जाति-कर्म से भी ऊपर रखते हैं । गांधीजी का यह कहना था कि जाति कर्म के आधार पर भेदभाव एक प्रकार की विकृति है जो कालांतर में इस व्यवस्था का हिस्सा बन गयी । यंग इंडिया में लिखे गये अपने उपरोक्त लेख में वे स्पष्ट कहते हैं: 'जाति उच्चता या नीचता का बोधक नहीं है । यह तो अलग-अलग दृष्टिकोणों और तदनुरूप जीवन-पद्धतियों की स्वीकृति मात्र है ।' बिलग्रामी के अनुसार यह मजेदार बात है कि गांधीजी अपने इस कल्पित आदर्श जाति व्यवस्था के लिए कोई ऐतिहासिक साक्ष्य देने की जरूरत नहीं समझते ।

जहाँ तक जाति व्यवस्था में कालांतर में शामिल हो चुकी विकृतियों को दूर करने की बात थी, गांधी इसे समाज की आंतरिक शक्तियों के जरिये ही हल करना चाहते थे, न कि कानून बनाकर । वे उदारवादी पूंजीवादी व्यवस्था में निहित समानता के आदर्शों को व्यक्ति-केंद्रित मानते थे जिसमें समाज की भूमिका गौण हो जाती है । उनका मानना था कि जाति के प्रश्न को भक्ति आंदोलन सरीखे सामाजिक आंदोलन के जरिये ही सुलझाया जाना चाहिए, न कि राज्य सत्ता की जोर-जबरदस्ती से ।इसी क्रम में महात्मा गांधी उन्नीसवीं सदी में भारत में पाश्चात्य विचारों से उत्प्रेरित सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों की सीमाओं को भी चिह्नित करते हैं ।

अकील बिलग्रामी अपने व्याख्यान में आगे कहते हैं कि महात्मा गांधी का यह मानना था कि पश्चिमी सभ्यता से भिन्न आधुनिकता एवं पूंजीवाद का प्रसार भारत में पूर्व-आधुनिक संबंधों एवं पहचान को पूर्णरूपेण कभी भी खत्म नहीं कर पाएगा । इसकी एक बड़ी वजह गांधीजी के अनुसार यह थी कि पाश्चात्य सभ्यता से इतर भारतीय सभ्यता में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक बल अत्यधिक प्रबल हैं । ऐसे में आधुनिकता के प्रसार के बावजूद भारत के आम लोग पूर्व-आधुनिक पहचान एवं संबंधों को पूरी तरह से छोड़ नहीं पायेंगे । बिलग्रामी यह तर्क देते हैं कि गांधी की यह बात आगे चलकर काफी हद तक सही भी साबित हुई। भारतीय पूंजीपति एवं सर्वहारा वर्ग दोनों ही अपने पूर्व-आधुनिक पहचान एवं बंधनों से कभी भी पूर्णरूपेण मुक्त न हो सके फिर चाहे वो जातीय पहचान हो या क्षेत्रीय अस्मिता ।

वहीं दूसरी तरफ, बिलग्रामी के अनुसार, गांधीजी किसी जाति विशेष के कर्म को महत्वहीन अथवा घृणित मानने की आलोचना करते हैं । उनके अनुसार प्रत्येक जाति कर्म का समाज की दृष्टि से समान महत्व है । दूसरे अर्थों में एक भंगी का कार्य ब्राह्मण के जाति कर्म से कहीं से भी छोटा अथवा महत्वहीन नहीं है । बल्कि, गांधीजी एक भंगी के कर्म को ब्राह्मण के जाति-कर्म से भी ऊपर रखते हैं । गांधीजी का यह कहना था कि जाति कर्म के आधार पर भेदभाव एक प्रकार की विकृति है जो कालांतर में इस व्यवस्था का हिस्सा बन गयी । यंग इंडिया में लिखे गये अपने उपरोक्त लेख में वे स्पष्ट कहते हैं: 'जाति उच्चता या नीचता का बोधक नहीं है ।

अंत में बिलग्रामी यह दर्शाते हैं कि कैसे समय के साथ गांधी जाति के प्रश्न को लेकर अपने विचारों में लगातार बदलाव भी लाते रहे । 1920 एवं 30 के दशक में जातीय अस्मिता के राजनीतिकरण के दौर में गांधी ने जाति के प्रश्न को देखने के अपने नजरिए एवं उसे सुलझाने के तौर-तरीकों में भी यथोचित बदलाव लाया। बिलग्रामी के अनुसार बाबासाहब भीमराव अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत चुनौती का इस बदलाव में काफी बड़ा योगदान रहा । हालांकि, यह बदलाव गांधीवादी विचारों के लचीलेपन को भी परिलक्षित करता है ।

प्रस्तुति: **सौरव राय**
शोध अधिकारी,
गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

गतिविधियाँ

प्रभाष प्रसंग आयोजित

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति और प्रभाष परम्परा न्यास द्वारा 14 जुलाई, 2024 को गांधी दर्शन, राजघाट में प्रभाष जोशी स्मृति व्याख्यान, ''प्रभाष प्रसंग'' का आयोजन किया गया। जिसका विषय था–''लोकतंत्र और संसदीय मर्यादा''। यह व्याख्यान माननीय सांसद श्री के.सी. त्यागी ने दिया। कार्यक्रम की अध्यक्षता समिति के कार्यकारी सदस्य श्री बनवारी जी ने की। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री राम बहादुर राय ने स्वागत भाषण दिया। समिति के निदेशक डॉ ज्वाला प्रसाद ने प्रख्यात शास्त्रीय गायिका श्रीमती कोमकली कलापानी और उनके संगतकारों को गांधी चरखा और अंगवस्त्रम से सम्मानित किया। कोमकाली कलापानी ने कबीर और अन्य भजनों की प्रस्तुति दी। कार्यक्रम में समिति के कार्यकारिणी सदस्य श्री महेश चंद शर्मा, सहित अनेक गणमान्य लोग उपस्थित थे।

न्यायिक अधिकारियों ने सीखा अहिंसक संचार का उपयोग

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति ने 26 जुलाई को न्यायिक अधिकारियों को अहिंसक संचार के उपयोग का प्रशिक्षण दिया। इस विषय पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें दिल्ली न्यायिक अकादमी के 79 अधिकारियों ने भाग लिया। इसका संचालन कार्यक्रम अधिकारी डॉ. वेदाभ्यास कुंडू ने किया। समिति के प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार ने औद्योगिक विवादों से निपटने के अपने अनुभव साझा किए। उन्होंने बताया कि न्यायपालिका में गांधीवादी दर्शन का उपयोग कैसे किया जा सकता है।

मंडेला को याद किया गया

दक्षिण अफ्रीका के पूर्व राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला की 106वीं जयंती के उपलक्ष्य में, ''क्षमा और सुलह की कला: मदीबा से सबक'' शीर्षक सम्मेलन का उद्घाटन दक्षिण अफ्रीका के कार्यवाहक उच्चायुक्त, श्री सेडरिक सी. क्रॉले ने 18 जुलाई, 2024 को गांधी दर्शन, राजघाट में किया। मुख्य भाषण दक्षिण एशियाई विश्वविद्यालय की पूर्व अध्यक्ष डॉ कविता शर्मा ने दिया। विशेष भाषण दिल्ली विश्वविद्यालय के अफ्रीकी अध्ययन विभाग के डॉ. ए.एस. यारुइंगम ने दिया। समारोह की अध्यक्षता गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के निदेशक डॉ ज्वाला प्रसाद ने की। के आर मंगलम वर्ल्ड स्कूल, वैशाली के बच्चों के मार्चिंग बैंड द्वारा अतिथियों का गर्मजोशी से स्वागत किया गया। इसके अलावा, एआरएसडी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय और इंदिरापुरम पब्लिक स्कूल, इंदिरापुरम के बच्चों द्वारा प्रस्तुत सांस्कृतिक प्रस्तुतियों ने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। सम्मेलन में 28 दूतावासों और उच्चायोगों के राजदूतों, उच्चायुक्तों और सचिवों ने भाग लिया। इस अवसर पर सभी गणमान्य व्यक्तियों को गांधी स्मृति एंव दर्शन समिति द्वारा सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में समिति के कार्यक्रम अधिकारी डॉ वेदाभ्यास कुंडू द्वारा तैयार ''कानून के साथ संघर्ष में बच्चे'' शीर्षक से एक स्मारिका का विमोचन किया गया। समिति के कार्यक्रम कमेटी सदस्य श्री राजकुमार शर्मा ने अपने संबोधन में विशिष्ट सभा के प्रति आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का समापन गांधी स्मृति एंव दर्शन समिति के प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार द्वारा प्रस्तावित धन्यवाद प्रस्ताव के साथ हुआ।

संग्रहालय के लिए डाक टिकट भेंट

भारत में साइप्रस के उच्चायुक्त महामहिम श्री इवागोरस व्रियोनिडेस ने गांधी स्मृति में महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि अर्पित की। निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद ने गांधी चरखा और खादी अंगवस्त्रम भेंट कर उनका स्वागत किया। श्री व्रियोनिडेस ने गांधी दर्शन में प्रस्तावित स्टाम्प संग्रहालय के लिए साइप्रस में 2019 में जारी गांधीजी को समर्पित टिकट और लिफाफे भेंट किए। उन्होंने महात्मा गांधी कक्ष और संग्रहालय का भी दौरा किया।

समर स्कूल आयोजित

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति द्वारा बाल सुधार गृह दिल्ली में गांधी समर स्कूल का आयोजन 22 से 29 जुलाई तक किया गया। इसके तहत बाल अपचारियों के लिए वॉकिंग मेडिटेशन, बच्चों को रोल प्ले के माध्यम से दूसरों के प्रति दया और सेवा के महत्व के बारे में बताया गया। इसके अलावा, नृत्य, रंगमंच, क्विल आर्ट और पेंटिंग का भी प्रशिक्षण दिया गया। इस कार्यक्रम में समिति के निदेशक डॉ ज्वाला प्रसाद, प्रशासनिक अधिकारी संजीत कुमार, कार्यक्रम अधिकारी डॉ वेदाभ्यास कुंडू भी उपस्थित थे।

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

हमारे आकर्षण

गांधी स्मृति म्यूजियम (तीस जनवरी मार्ग)

* गांधी स्मृति म्यूजियम
* डॉल म्यूजियम
* शहीद स्तंभ
* मल्टीमीडिया प्रदर्शनी
* महात्मा गांधी के पदचिन्ह
* महात्मा गांधी का कक्ष
* महात्मा गांधी की प्रतिमा
* वर्ल्ड पीस गोंग

गांधी दर्शन (राजघाट)

* गांधी दर्शन म्यूजियम
* क्ले मॉडल प्रदर्शनी
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री (200 लोगों के लिये)
* सेमीनार हॉल (150 लोगों के लिये)
* कॉन्फ्रेंस हॉल (300 लोगों के लिये)
* प्रशिक्षण हॉल : (80 लोगों के लिये)
* ओपन थियेटर
* राष्ट्रीय स्वच्छता केन्द्र
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री

(डॉ. ज्वाला प्रसाद)
निदेशक

प्रवेश निःशुल्क (प्रातः 10 बजे से सायः 6.30 बजे तक), सोमवार अवकाश
हॉल व कमरों की बुकिंग के लिये संपर्क करें– ईमेलः 2010gsds@gmail.com, 011-23392796

gsdsnewdelhi www.gandhismriti.gov.in

RNI NO. DELHIN/2018/76242

''आप मुझे जो सजा देना चाहते हैं, उसे कम कराने की भावना से मैं यह बयान नहीं दे रहा हूँ। मुझे तो यही जता देना है कि आज्ञा का अनादर करने में मेरा उद्देश्य कानून द्वारा स्थापित सरकार का अपमान करना नहीं है, बल्कि मेरा हृदय जिस अधिक बड़े कानून से-अर्थात अन्तरात्मा की आवाज को स्वीकार करता है, उसका अनुसरण करना ही मेरा उद्देश्य है।''

(मोहनदास करमचंद गांधी)

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली
(एक स्वायत्त निकाय, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार)

प्रकाशक - मुद्रक : स्वामी गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के लिए पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092 से मुद्रित तथा गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110092 से प्रकाशित।